ੴ ਸਤਿਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ॥

गुरू ग्रंथ साहिब - जान पहचान

लेखक : स. जसबीर सिंघ

क्रांतिकारी गुरू नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

Website : www.sikhworld.info

गुरू ग्रंथ साहिब – जान पहचान
धर्म ग्रंथ

धर्म ग्रंथ, धर्म या कौमीयत की विरासत का गौरव होते हैं और किसी भी धर्म के अलग अस्तित्व का केन्द्रीय धरातल भी । धर्म ग्रंथ के बिना धर्म का अस्तित्व सम्भव ही नहीं है ।

धर्म ग्रंथ ही अपने पैगम्बरों, गुरूओं, पीरों द्वारा दिए हुए सिद्धांतों से अपने पैरोकारों को धर्म से जोड़ने का राह निर्धारित करते हैं तथा जीवन को सही दिशा प्रदान करते हैं । इन्हीं धर्मग्रंथों का ओट – आसरा लेकर ही आज के प्रमुख धर्म हज़ारों वर्ष प्राचीन हेने के बावजूद भी अपनी सार्थकता को नया नवेला रख रहे हैं । इन्हीं के कारण महापुरूषों के उपदेश केवल उन्हीं के धर्म को ही आकर्षित नहीं करते बल्कि सारे विश्व के लिए प्रेरणा के स्रोत बन जाते हैं । इन्हीं धर्म ग्रंथों के कारण ही संसार के हर हिस्से में धर्मो एवं सभ्याचारक लोगों की आमद नज़र आती है । धर्म ग्रंथ ही धर्म का केन्द्रीय सरोकार एवं धर्म के सिद्धांतों की ज़िन्द–जान होते हैं ।

विश्व के धर्मो के इतहास की ओर नज़र डालने पर उपरोक्त सत्य के दीदार प्रत्यक्ष ही रूपमान हो जाते हैं कि बहुत सारे धर्मो के हज़ारों वर्ष प्राचीन होने के बावजूद भी उनके धर्म ग्रंथ के करण उनकी सार्थकता ज्यों की त्यों नयी नवेली है। इन धर्म ग्रंथों के कारण ही हज़ारों वर्ष प्राचीन होने के बावजूद यहूदी धर्म अपने प्रकाश से संसार में अपना नाम बनाये हुए हैं । ईसाई धर्म दुनिया के बड़े हिस्से की रूह की खुराक है तथा इस्लाम अनुयायियों की कट्टरता के बावजूद वह धरती का खूबसूरत फूल है, जिसकी महक से करोड़ों रूहें अल्लाह एवं पैगम्बरी रूहों को नतमस्तक है । पूर्वी धर्मो में भी वेदान्त के अनुयायी इस धर्म को अंगीकार किए बैठे हैं और बुद्ध धर्म को समकालीन धर्म की मार से बचने के लिए व आज तक ज्यों का त्यों नया–पवेला रखने के लिए उनके धर्मग्रंथ ही उनका सहारा बने हुए हैं ।

धर्मो के ऐतिहासिक प्रसंग से स्पष्ट हो जाता है कि जो कौमें धर्म ग्रंथ रूपी विरासत के फखर को सम्भाल कर रखने से असमर्थ हो जाती है, वे समय के काल चक्कर में अपना स्वरूप व धर्म दोनों गवां बैठती हैं और भी सरल शब्दों में बताना हो तो कहा जा सकता है कि वह कौमीयत जो अपने धर्म ग्रंथ के रहस्य को समझने में समर्थ होती है, वह हमेशाा हमेशा के लिए अमर हो जाती है तथा जो कौमें अपनी विरासत के इस गौरव (धर्म ग्रंथ) के समझने में असमर्थ हो जाती है, उनका खात्मा भी लाज़मी होता है । इतिहास में अनेक उदाहरणें इसकी पुष्टि में दी जा सकती हैं कि अनेक अमीर सभ्याचार, कौमें व धर्म जिन्होंने अपने धर्मग्रंथ रूपी खज़ाने को सम्भालने में कोताही की, वे सारे केवल इतिहास की किसी समय घटी घटना बन कर ही रह गए ।

स्पष्ट है कि धर्मग्रंथ एवं धर्म का रिश्ता रूह एवं श्रीर वाला है । जिस प्रकार शरीर में प्राण न हों तो शरीर का कोई अर्थ नहीं रहता, उसी प्रकार अगर धर्मग्रंथ न हो तो धर्म की भूमिका का प्रसंग ही स्थापित नहीं होता । इसी प्रसंग में किसी विद्वान ने धर्म ग्रंथों की महत्त्वता का ब्यान बहुत ही खूबसूरती से करते हुए इसकी तुलना पानी के ऐसे चश्मों से की है जो थके–हारे मुसाफिरों के लिए आरामगाह ही नहीं बनते बल्कि ज़िन्दगी के मारूथलों की तपश में थके–हारे, भटकते एवं जल–भुन रहे लोगों को भीतर तक अपनी ठंडक से सहज अवस्था के ध ारक बना देते हैं । स्पष्ट है कि धर्मग्रंथ के बिना मनुष्य की ज़िन्दगी की कोई अहमीयत ही स्वीकर नहीं की जा

सकती ।

धर्म की सदीवता, मनुष्य की उत्तमता तथा धर्म के संस्थात्मक रूप में धर्म ग्रंथ ही केन्द्रीय भूमिका अदा करता है । इसके साथ ही धर्म ग्रंथ ही किसीभी भिन्न कौम की तथा निराले अस्तित्व को सिद्ध करने में केन्द्रीय भूकिा अदा करता है । धर्म या कौमीयत के अलग अस्तित्व के लिए पांच मापदण्ड निश्चित किए गए हैं - पैगम्बर, लिपि, सभ्याचार, धर्म ग्रंथ तथा स्वरूप । इन तत्वों में धर्म ग्रंथ की श्रेष्ठता अपने अप स्पष्ट हो जाती है कि धर्मग्रंथ के बिना धर्म का भिन्न अस्तित्व चित्रित करना सम्भव ही नहीं है ।

धर्म ग्रंथ असल में किसी भी धर्म के ईश्वरीय प्रकाशन का लिखित संग्रह होते हैं या ऐसा कहा जाए कि किसी भी धर्म के पैगम्बर या धर्म प्रवर्तक ने जो ईश्वरीय नाद सुना, उसके संग्रहित रूप को धर्मग्रंथ कहते हैं । यह नाद या इलहाम चाहे ऐतिहासिक घटना के रूप में नज़ल हुआ हो चाहे शब्द बाणी के रूप में । इस बात का सिक्ख धर्म क प्रवर्तक गुरू नानक साहिब इस प्रकार प्रकटाव करते हैं -

जैसी मैं आवै खसम की बाणी,तैसड़ा करी गिआनु वे लाली ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 722)

या और भी खूबसूरत व सरल रूप में इसे इलहामी नाद के उतरने का प्रसंग इस प्रकार स्थापित करती है ।

हउ आपहु बोलि न जाणदा,मैं कहिआ सभु हुकमाउ जीउ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 763)

उपरोक्त बाणी इस बात का प्रमाण है कि धर्म ग्रंथ असल में धर्म के प्रवर्तकों के ईश्वरीय बोलों का खजाना है ।

विश्व भर के प्राचीन धर्म यहूदी, ईसाई, इस्लाम या हिन्दू धर्म आदि के इतिहास की ओर अगर नज़र डालें या इन धर्मो के धर्म ग्रंथों के समक्ष हों तो गुरूनानक पातशाह के शब्दों की पुष्टि होती है कि परमेश्वर ने स्वयं अलग-अलग समय में इन धर्मो के पैगम्बरों के साथ अहिद किए और अपने 'आलौकिक वचन' धरति लोकाई के लिए भेजे । यह अहद चाहे यहूदी धर्म के पैगम्बर इब्राहिम या मोज़िज़ से किया हो, ईसाई धर्म के पैगम्बर यीसु से या इस्लाम धर्म के बानी मुहम्मद साहिब से । पूर्वी धर्मो में वह चहो हिन्दू धर्म के ऋषियों ने द्रष्टा रूप में देखा हो या महावीर जैन तथा महात्मा बुद्ध ने 'सच' के रूप में । बेशक जैन धर्म एवं बुद्ध धर्म अकाल पुरख की शक्ति में अविश्वास के धारणी हैं, लेकिन किसी रहस्यमयी ज्ञान से शरसार होने के संकल्प में इनका पूर्ण विश्वास है । यही रहस्यमयी ज्ञान उस समय से लेकर अब तक मानवता के भले हित, धर्म ग्रंथों के रूप में हज़ारों वर्ष प्राचीन होने के बावजूद कार्य कर रहा है ।

धर्म ग्रंथों को इसीलिए 'बारशे रहमत' की संज्ञा से भी निवाज़ा जाता है क्योंकि इलाही रहमत, पैगम्बरों पर उतरती है तथा यह रहमत शब्दी रूप धारण कर दुनिया में फैली काली रात का खात्मा करती है तथा सच के नये सूर्य का प्रकाश होता है ।

सो स्पष्ट है कि धर्मग्रंथ संसार रूपी मारूथलों की तपश में जल रही मानवता के लिए पानी के ठडे मीठे झरने की तरह काम ही नहीं करते, बल्कि ठण्डी मीठी छांव बन कर पूरी मानवता का दर्द अपने सीने से लगाकर उनका मार्गदर्शन भी करते हैं ।

सिक्रव धर्म

सिक्रव धर्म संसार के महत्वपूर्ण धर्मो में एक नवीन धर्म है, जिसका प्रकाश गुरू ननक पातशाह के आगन से हुआ । 1469 ईस्वी में गुरू नानक साहिब के आगमन के समय हिन्दुस्तान की हालत अस्त-व्यस्त थी। सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक तौर पर देश का पूर्ण पतन हो चुका था। जन-साधारण साहसहीन, निराशावादी और कायर बन चुका था । आत्म विश्वास, स्वाभिमान का नमो-निशान मिट चुका था । लोग सम्मान-विहीन ज़िन्दगी को ही ज़िन्दगी समझ बैठे थे । भाषा, इष्ट, सभ्याचार एवं संस्कृति का पूर्ण तौर पर त्याग कर दिया था। मुसलमान हुक्मरानों का धर्म था जिन्होंने गैर-मुसलमानों पर जुल्म करने को ही धर्म समझ लिया था। हिन्दुओं का यहां तक पतन हो चुका था कि वे अपने घरों के अन्दर छिप कर अपने इष्ट की उपासना व पूजा करते थे। वह अपनी मातृभाषा का त्याग करके फारसी बोलते थे व मियां कहलवाने में मन महसूस करते थे । ढोंग तथ पारवण्ड ही मनुष्य जीवन का हिस्सा बन चुके थे ।

गऊ बिराहमण कउ करु लावहु गोबरि तरणु न जाई ।।
धोती टिका तै जपमाली धानु मलेछां रवाई ।।
अंतरि पूजा पड़हि कतेबा संजमु तुरका भाई ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 471)

ऐसे हालातों में पंजा बकी धरती पर सिक्रव धर्म का सूर्य उदय हुआ, जिसने सदियों से दबी-कुचली मनवता को मनुष्य होने का अहसास ही नहीं कराया बल्कि 'जूझ मरों ता साच पतीजै' का नया मार्ग भी दर्शाया। इस का प्रकटाव भई गुरदास जी इस प्रकार करते हैं -

सतिगुर नानक प्रकटिआ मिटी धुंधु जगि चानण होआ ।।
जिऊ कर सूरजु निकलिआ तारे छपे अंधेरु पलेआ ।।
जिथे बाबा पैर धरे पूजा आसणु थापणि सोआ ।।
बाबे तारे चारि चकि नऊ रवंडि प्रिथमी सचा ढोआ ।।(भाई गुरदास जी, वार 1, पउड़ी 27)

भाई गुरदास जी के उपरोक्त शब्दों की पुष्टि बीसवीं सदी में उर्दू के शायर सर मुहम्मद इकबाल ने बहुत खूबसूरती से इस प्रकार की -

बुत कवां फिर बाद मुददत के मगर रोशन हुआ ।।
नूरे इबराहिम से अज़र का घर रोशन हुआ ।।
फिर उठी आरिवर सदा तौहीब की पंजाब से ।।
हिन्द को इक मरदि - कामलि ने जगाया रववाब से ।।

डॉ. मुहम्मद इकबाल के यह शब्द सिक्रव धर्म के प्रवर्तक गुरू नानक देव जी को सम्बोधित हैं और इस बात का प्रकटाव है कि धर्म के प्रवर्तक ने किस प्रकार हिन्दुस्तान की शोषित हो रही आम मानसिकता के भीतर स्वतन्त्रता की चिंगारी पैदा कर दी थी और सहम के सये में जीवन व्यतीत कर रही लोकाई को सिर ऊँचा करके चलने का ढंग सिरवाया था ।

सिक्रव धर्म को लोक जीवन में इन्कलाब लाने वाला धर्म कहा जाता है । इन्कलाब का अर्थ यहां मानसिक परिवर्तन लिया जा रहा है । लोगों के जीवन का नये रूप में निर्माण करना सिक्रवी का केन्द्रीय सरोकार है । समाज

का ऐसा पुर्न-निर्माण लोक-जीवन में पूर्ण बदलाव पर ही आधारित है ।

सिक्ख धर्म के प्रवर्तक इस बात से चेतन्न थे कि किसी देश या कौम की आत्मा आज़ाद एवं उसारू अध्यात्मक वायुमण्डल में ही प्रफुलित हो सकती है लेकिन हिन्दुस्तान की आत्मा सिक्ख धर्म के आगमन के समय गुलामी की जंजीरों में जकड़ी होने के कारण इस प्रकार बलहीन हो गई थी कि वह गुलामी की इन जंजीरों को तोड़ने में पूरी तरह असमर्थ हो गई थी । हिन्दुस्तान के मनों में कमज़ोरी, निराशता व फूट के काले बादलों ने मानव को हीनता की ओर इतना धकेल दिया था कि पराई चाकरी के जलते कोयले ने उनका जीवन काला व रसहीन करके, गुलामी की सड़न व बदबू को ही जीवन करार कर दिया था । कौमीयत व आज़ादी की भावना आम लोगों की मानसिकता में पूरी तरह मर चुकी थी । शूरवीरों के इस देश में आज़ादी पर खुद को कुर्बान करने के जज्बे, ब्राह्मण दिमाग की बाल से खाल उतारने वाली बारीक अकाल की भेंट हो चुके थे । लोग अपने जीवन में रीति-रिवाजों की पूर्ति बिना सोचे समझे एक बोझ की तरह या मज़बूरी में कर रहे थे । लोगों के कर्म व धर्म दोनों में अन्तर आ चुका था ।

असल में धर्म व लोक जीवन में पड़ा यह फासला ही मानसिक व सामाजिक तौर पर मनुष्य को पतन की ओर लेकर जा रहा था । भारतीय धर्म अपने स्वार्थ सिद्धि पर केन्द्रित था और भाईचारक समन्वय का उसने अन्त कर दिया था ।

ऐसी सामाजिक उथल-पुथल की स्थिति में आम लोग वही बिगड़े हालात वाला जीवन व्यतीत भी करते जाते और भीतर ही भीतर परेशान होते हुए भी चुप बैठने के लिए मजबूर होते । धर्म व धर्म के मुखिया उन्हें सब्र करना व रज़ा मानने वाले बनने की शिक्षा देकर सुलाए रखते, उन्हें स्वर्ग का लालच देकर जीने और इसमें से तसल्ली ढूँढने की शिक्षा भी दी जाती रही । लगभग ऐसा कुछ ही हिन्दुस्तान की धरती के ऊपर हो रहा था जब गुरू नानक देव जी इस धरती पर आए ।

सिक्ख धर्म का प्रारम्भ गुरू नानक पातशाह ने किया और सिक्खी के इस पवित्रा पौधे को नौ अन्य गुरू साहिबान ने सींचा, पाल-पोसा, सम्भला तथा बड़ा किया। गुरू नानक पातशाह के दिए हुए सिद्धांतों व सिक्खी के इस पौधे को फल लगने तक 230 वर्ष का समय लगा तथा इस पौधे के पवित्र फल का नाम 'खलसा' रखा गया। खालसा वह सर-ज़मीन थी जो केवल एक अकाल पुरख के अधीन थी । उसका किसी सामाजिक बर्ताव के अहलकार की अधीनगी में आने का सवाल ही नहीं था । इसका स्पष्ट प्रकटाव खलसाई बोल से हो जाता है -

वाहिगुरू जी का खालसा ।।
वाहिगुरू जी की फतहि ।।

इस वाहिगुरू के खालसे को अकाल पुरख ने अपने अलौकिक नाद के रूप में भेजाा, जिसके हुक्म में चलते हुए इसने अपनी ज़िन्दगी व्यतीत करनी थी । उसी 'अलौकिक नाद' को दसम पातशाह गुरू गोबिंद सिंह जी ने गुरगद्दी दे 'गुरू मानयो ग्रंथ' का निराला हुक्म जारी कर दिया । इस पवित्र शब्द को खालसा हृदयों ने इस प्रकार सम्भाला हुआ है -

आज्ञा भई अकाल की,तबै चलायो पंथ ।।
सब सिक्खन को हुक्म है,गुरू मानयो ग्रंथ ।।

आदि ग्रंथ

गुरू नानक पातशाह ने 'धुर की बाणी' का स्वयं उच्चारण भी किया व सम्भाला भी । आपजी ने इस बाणी को 'खसम की बाणी' जानकर अति आदर'-सत्कार का ढंग मानवता को समझया तथा इस नवीन धर्म की विलक्षण पहचन को सैद्धांतिक तौर पर स्थिर किया। यह पहली बार था । कि परमात्मा के अस्तित्व के संकल्प में सरगुण व निरगुण, निरभउ व निरवैर, दिखते संसार व अदृश्य ब्रह्मांड की विशालता में निरंतरता को 'एक ओंकार' का विस्तार बताया । हर कोई दुनिया के फर्ज निभाते हुए भी धर्मी जीवन व्यतीत कर सकता है । इस सब का विस्तार शब्द गुरू द्वारा होना बताया है । गुरू नानक पतशाह का अकीदा मनुष्य जाति को 'शब्द गुरू' से जोड़ने का था ताकि मानवता को वहम-भ्रम के व्यर्थ चक्करों में से निकाल कर एक अकाल पुरख की आराधना के लिए प्रेरित किया जाए ।

गुरू अंगद पतशाह ने इस बाणी की सम्भाल व विस्तार अपने गुरू काल में किया तथा गुरमुखी लिपि का श्रृंगार व प्राचर किया जिसमें इस बाणी की सम्भाल हो रही थी । गुरू अमरदास जी के समय गुरू घर का विरोध कुछ ज्यादा ऊँची सुर में हुआ तथा कच्ची वाणी की रचना भी हेने लग पड़ी जिसे अलग करने के लिए गुरू साहिब ने बाणी में ही इसका निर्णय दे दिया -

सतिगुरू बिना होर कची है बाणी ॥
बाणी त कची सतिगुरू बाझहु होर कची बाणी ॥
कहदे कचे सुणदे कचे कची आखि बखाणी ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 920)

गुरू रामदास जी ने संगीत व राग के पक्ष में बाणी की कलात्मकता को शिखर तक पहुंचाया । साथ ही आप जी ने बाणी व गुरू में अभेदता को स्पष्टता के साथ ब्यान किया -

बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंमृतु सारे ॥
गुरु बाणाी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 982)

गुरू अर्जुन देव जी ने सब से ज्यादा बाणी रचना तथा सम्पूर्ण बाणी का संकलन व सम्पादन करके इसे 'आदि ग्रंथ' का नाम दे दिया । यह दुनिया का प्रथम ऐसा धार्मिक ग्रंथ हुआ जिसका सम्पादन स्वयं धर्म के प्रवर्तक ने स्वयं किया । 'आदि ग्रंथ' के प्रथम प्रकाश के पश्चात गुरू साहिब ने अपना सिंहासन नीचा कर लिया और संगत को बाणी के सत्कार व प्यार का ढंग सिखाया ।

गुरू हरिगोबिन्द साहिब ने इस बाणी के प्रचर व प्रसार के लिए 'आदि ग्रंथ' के बहुत से स्वरूप तैयार करवाए तथ सब से ज्यादा उतारे गुरू हरि राय साहिब के समय हुए मिलते हैं । बाणी के अदब-सत्कार को कायम रखने के लिए पुत्र का त्याग भी करना पड़ा तो आपने राम राय को मुँह न लगाया और योग्यता को प्रमुख रखते हुए गुरू हरिकिशन साहिब को गुरगद्दी सौंप दी । गुरू तेग बहादुर साहिब ने इस बाणी के प्रचर प्रसार के लिए बहुत प्रचारक दौरे किए, स्वयं बाणी का उच्चारण किया तथा एक नया राग 'जैजावंती' का प्रयोग भी किया ।
गुरू गोबिन्द सिंह जी ने पावंटा व आनन्दपुर साहिब में बाणी की सम्भाल, लिखई व व्याख्या का विशाल स्तर पर प्रबन्ध किया तथा तलवंडी साबो में आज की मौजूदा 'गुरू ग्रंथ साहिब' की बीड़ का स्वरूप तैयार करवाया, जिसे नांदेड़ में गुरगद्दी सौंप कर, स्वयं माथ टेक कर, गुरू ज्योति उसमें टिका कर, सिक्खों को उसके अधीन कर दिया

। इस प्रकार आप ने गुरू ग्रंथ पंथ को 'गुरू ग्रंथ' के अधीन कर दिया ।

गुरू मान्यो ग्रंथ

दशम पतशाह गुरू गोबिन्द सिंह जी ने आनन्दपुर साहिब छोड़ने के पश्चात् तलवंडी साबो में रैन-बसेरा बनाया तथा वहां 'आदि ग्रंथ' की सम्पूर्ण बाणी को लिखित रूप प्रदान किया । इस लिखित रूप की सेवाा का कार्य भाई मनी सिंह जी केहिस्से आया।इस ग्रंथ में गुरूतेग बहादुर साहिब जी की बाणी दर्ज की व जैजावंती राग शमिल कर रागों की संख्या 31 कर दी । इसी पवित्र धर्म ग्रंथ को 1708 ईस्वी में गुरू गोबिन्द सिंह जी नेज्योति-जोति समाने के समय गुरगद्दी देकर सिक्खें को 'गुरू ग्रंथ साहिब' के अधीन किया और 'शब्द गुरू' का नया सिद्धान्त स्थापित कर दिया ।

आज्ञा भई अकाल की, तबै चलायो पंथ ॥
सब सिखन को हुक्म है गुरू मानयो ग्रंथ ॥
गुरू ग्रंथ जी मानिआहु, प्रगट गुरां की देह ॥
जो प्रभु को मिलबो चहै, खोज शब्द मै लेह ॥

गुरू ग्रंथ साहिब का सम्पादन

गुरू ग्रंथ साहिब के सम्पादन का कार्य पांचवे पातशाह गुरू अर्जुन देव जी द्वारा सम्पूर्ण हुआ। 1599 ईस्वी में इस ग्रंथ का सम्पादन का कार्य आरम्भ हुआ। सम्पादन के कार्य के लिए अमृतसर के बिल्कुल समीप रामसर के रमणीक स्थल का चुनाव किया गया । इस पवित्र 'आदि ग्रंथ' को लिखने का मान भाई गुरदास जी को प्राप्त हुआ और 1604 ईस्वी में यह प्रवित्र 'आदि ग्रंथ' सम्पन्न हुआ ।

'आदि ग्रंथ' का प्रथम प्रकाश 1 सितम्बर 1604 ईस्वी को श्री हरिमन्दिर साहिब में किया गया तथा बाबा बुढ्ढा जी को इसका प्रथम ग्रंथी नियुक्त किया गया । इस प्रथम प्रकाश के समय जो हुक्मनामा आया, वह यह है -

सूही महला 5

संत के कारजि आपि खलोइआ,हरि कंमु करावणि आइआ राम ॥
धरति सुहावी तालु सुहावा,विचि अमृत जलु छाइआ राम ॥
अमृत जलु छाइआ पूरन साजु कराइआ,सगल मनोरथ पूरे ॥
जै जै कारु भइआ जग अंतरि,लाथे सगल विसूरे ॥
पूरन पुरख अचुत अबिनसी,जसु वेद पुराणी गाइआ ॥
अपना बिरदु रखिआ परमेसरि,नानक नामु धिआइआ ॥ (1)

(गु. ग्र. सा. अंग 783)

बाणी सम्पादन

गुरू अर्जुन देव जी द्वारा सम्पादित किए गुरू ग्रंथ साहिब के पवित्र स्वरूप को सरल तरीके से समझने के

लिए इसे तीन भागों में बांट कर देखा जा सकता है –

1. अंग संख्या 1 से 13 तक – नितनेम की बाणियां दर्ज की गई हैं जिनमें 'जपु' राग रहित बाणी है तथा 'सो दरु' व 'सोहिला' के शब्द संग्रह रगों में भी है ।

2. अंग संख्या 14 से 1353 तक – यह सम्पूर्ण राग बद्ध बाणी है और गुरू ग्रंथ साहिब का बड़ा हिस्सा है । गुरूअर्जुनदेव जी ने इस हिस्से को 30 रागों में बांटा तथा बाद में गुरू गोबिन्द सिंह जी ने गुरूतेग बहादुर साहिब की पवित्र रचना एवं जैजावंती राग दर्ज करके रगों की संख्या 31 कर दी ।

3. अंग संख्या 1353 से 1430 तक – इस भाग में अंकित बाणियों का विवरण इस प्रकार है –

1.	सलोक सहसकृती महला पहिला	1353
2.	सलोक सहसकृती महला पंजवां	1353
3.	गाथा महला 5	1360
4.	फुनहे महला 5	1361
5.	चउबोले महल 5	1363
6.	सलोक भगत कबीर जीउ के	1364
7.	सलोक शेख फरीद के	1377
8.	सवैये श्री मुखबाक महला 5	1385
9.	सवैये भट्टों के	1389
10.	सलेक वारां ते वधीक	1410
11.	सलोक महला 9	1426
12.	मुंदावणी महला 5	1429
13.	राग माला	1429

रागों की तरतीब

राग संगीत की बुनियाद है और संगीत के महत्व को गुरू साहिबान भली भांति जानते थे । सारी सूक्ष्म कलाओं के संगीत शिखर पर आता है क्योंकि यह मनुष्य को विस्माद में ले जाता है। संगीत का प्रभाव ऐसा होता है कि राह चलते राहगीरों के पांव अपने अप रुक जाते हैं, पक्षी पंख मारना छोड़ देते हैं, जैसे कि हमें पता ही है कि गुरू नानक पातशाह के शब्द और भाई मरदाना की रबाब हमेशा अंग–संग रहे ।

गुरमति संगीत

गुरू ग्रंथ साहिब जी गुरमति संगीत के भी भण्डार हैं । गुरमति संगीत भारत की अन्य संगीत पद्धतियों से कुछ भिन्न है तथा इसने अन्य संगीत पद्धतियों को बहुत कुछ दिया है । भारत में संगीत की यह किस्में प्रमुख हैं – हिन्दुस्तानी संगीत, कर्नाटक या दक्षिणी संगीत, इस्लामी सूफीआना (काफी) संगीत एवं गुरमति संगीत । गुरमति संगीत अन्य पद्धतियों से इसीलिए विलक्षण है कि इस पद्धति में शब्द की प्रधानता है 'राग नाद सबदे

सोहणे' । यहां चौकियों की परम्परा है, अध्यात्मिकता को कलात्मकता से पहल है और अन्य तीन पद्धतियों से अच्छा मेल होने के बावजूद इसकी भिन्न पहचान भी है।

गुरू ग्रंथ साहिब में गुरमति संगीत के शुद्ध रूप में राग के थाट व सुरें कायम हैं । इसमें 31 मुख्य राग हैं तथ 30 छाया लग राग हैं जैसे गउड़ी गुआरेरी, गउड़ी चेली आदि । दक्षिणी पद्धति से मिलते 'मारू दखणी', 'रामकली दखणी' भी हैं और पंजाब के खास 'मांझ' व देशी राग - आसा, सूही व तुखारी हैं । इसमें लोक वारों की धुनों पर गाने की हिदयत है जो इसे कठोर शस्त्री अनुशासित पकड़ से मुक्त कर गुरमति संगीत अनुसारी बनाकर सहज रूप प्रदान करती है । यह लोक संगीत के गायक रूपों की अपने आप छूट देकरसहज अनुशसन में बांधती है । गुरमति संगीत में वारों का गायन, पड़ताल और तबले वाले का गायन में सम्पूर्ण तौर पर शामिल होना, इस पद्धति को हिन्दुस्तानी संगीत परम्परा, दक्षिणी संगीत परम्परा एवं सूफीआना परम्परा से लासानी बनाता है ।

इसके इलावा संगीत का सम्बन्ध मनुष्य की मनोदश के साथ भी है । जैसे जैसे मनोदशा बदलती है, उसी प्रकार रागों के गाने का समय भी बदलता है, इसीलिए गुरू ग्रंथ साहिब में रागों को बहुत महत्वता दी गई है ।गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज राग तरतीब इस प्रकार है -

1. रागु सिरी रागु

श्री गुरू ग्रंथ साहिब का प्रथम राग सिरी रागु है । यह राग भारतीय परम्परा में सब से प्राचीन माना जाता है । गायन में इसे सब से कइन भी माना जाता है । इसकी महत्वता को भाई गुरदास जी ने इस प्रकार चित्रण किया है - 'रागन में सिरी रागु पारस बखान है' । इस राग के गायन का समय पिछले पहर का है । इसे प्रथम राग का स्थान देने के पीछे गुरू पातशाह ने गुहज का प्रकटाव किया है । इस राग से सम्बन्धित बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 14 से 93 तक अंकित है ।

2. रागु माझ

इस राग की बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 94 से 150 तक दर्ज है । यह राग पंजाब के इलाके मांझा में विकसित हुआ प्रवान माना जाता है क्योंकि भारतीय संगीत में कहीं भी यह राग नहीं मिलता । माझ का भाव मध्य होता है । सो, इसके अध्यात्मिक अर्थ है मनुष्य के हृदय में से निकली हूक । गुरू अर्जुन साहिब की महत्वपूर्ण रचना 'बारह माहा' भी इसी राग में है । इस राग का सम्बन्ध पंजाब से होने के कारण किसी भगत की वाणी इस राग में नहीं है । इस राग के गायन का समय रात्रि का पहला पहर है ।

3. रागु गउड़ी

गउड़ी राग में बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 151 से 346 तक दर्ज है । सबसे ज्यादा बाणी इस राग में दर्ज है । यह एक गम्भीर प्रकार का राग है तथा इस में विरह की प्रधानता है। 'सुखमनी साहिब' एवं 'बावन अखरी' बाणियां इसी राग में दर्ज हैं । गउड़ी राग की अन्य किस्मों में भी गुरू ग्रंथ साहिब में बाणी दर्ज है - गउड़ी गुआरेरी, मउड़ी दखणी, गउड़ी चेली, गउड़ी बैरागणि, गउड़ी पूरबी दीपकी, गउड़ी पूरबी, गउड़ी दीपकी, गउड़ी माझ, गउड़ी मालवा व गउड़ी सोरइ ।

4. रागु आसा

सिक्ख धर्म में इस महत्वपूर्ण राग का गायन 'अमृत बेला' में किया जाता है । इससे सम्बन्धित बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 347 से 48 8 तक अंकित है । इस राग की महत्वपूर्ण रचना 'आसा की वार' का गायन नियम से किया जाता है । आसा राग की अन्य किस्में काफी व आसावरी भी गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज है ।

5. रागु गूजरी

भारत का प्रसिद्ध राग गूजरी है तथा उत्तर व मध्य भारत में यह बहुत हरमन प्यारा है । इस राग के गायन का समय दोपहर का है । यह राग गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 489 से 526 तक है ।

6. रगु देवगंधारी

इस राग की बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 527 से 536 तक दर्ज है । इसके गायन का समय चार घड़ी दिन चढ़े भाव दिन के दूसरे पहर का है । इसके एक शब्द का गायन राग देवगंधार में भी है ।

7. रगु बिहागड़ा

यह राग गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 537 से 556 तक दर्ज है । इसके गायन का समय अर्ध रात्रि का है । यह राग जुदाई व वियोग का प्रतीक है। जुदाई व वियोग ही परमात्मा से मिलाप का रास्ता खोलते हैं ।

8. रागु वडहंसु

वडहंस राग में बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 557 से 594 तक अंकित है । इस राग के गायन का समय दोपहर या अर्ध रात्रि माना गया है । खुशी भरी 'घोड़ीआ' व दुखभरी 'अलाहुणीआ' इसी राग में गायन की गई है । इसकी एक किस्म वडहंस दखणी भी गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज है ।

9. रागु सोरठ

राग सोरठ सब से मनमोहक व सुखैन राग स्वीकार किया गया है क्योंकि इसके सरल शब्द अपने आप ही जिज्ञासु के मुख पर चढ़ जाते हैं । इसके गायन का समय रात्रि का दूसरा पहर निश्चित है । यह गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 595 से 659 तक अंकित है ।

10. रागु धनासरी

राग धनासरी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 6 60 से695 तक अंकित है । यह बहुत प्राचीन राग है । गुरू नानक पातशाह ने 'आरती' का गायन इसी राग में किया है । इस राग के गायन का समय दिन का तीसरा पहर निश्चित किया गया है ।

11. रागु जैतसरी

संस्कृत ग्रंथों में इस राग को जैश्री या जयंत श्री नामों से लिखा गया है । गुरू ग्रंथ साहिब में इसे जैतसरी राग के नाम से लिखा गया है । यह गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 696 से 710 तक अंकित है तथा इसके गायन का समय चौथा पहर निश्चित किया गया है ।

12. रागु टोडी

टोडी राग आम तौर पर राजा महाराजाओं की स्तुति के लिए गाया जाता था । गुरू ग्रंथ साहिब में इस राग का गायन अकाल उस्तति के लिए किया जाता है क्योंकि सिक्ख धर्म केवल प्रभु को ही सब का मालिक स्वीकार

करता है । इस राग को गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 711 से 718 तक दर्ज किया गया है । इस राग के गायन का समय दिन का दूसरा पहर निश्चित है ।

13. रागु बैराड़ी

बैराड़ी राग की जितनी किस्में मध्यकाल में प्रचलित थी, उतनी शायद किसी राग की नहीं थी । यह राग बहुत कइन माना जाता है । गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 719 से 720 तक इसे स्थान दिया गया है तथा इसके गायन का ठीक समय दिन का चौथा पहर माना गया है ।

14. रागु तिलंग

गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 721 से 727 तक तिलंग राग में बाणी दर्ज है । यह बहुत सरल राग है । 'बाबरवाणी' के शब्द इसी राग में दर्ज हैं । इस राग के गायन का समय दिन का तीसरा पहर है इसका एक रूप 'तिलंग काफी' भी गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज है ।

15. रागु सूही

सूही उत्साह व जोश का राग माना जाता है लेकिन प्राचीन भारतीय राग इतिहास में इसका जिक्र नहीं मिलता । इस राग से सम्बन्धित बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 728 से 794 तक दर्ज है । इसके दो रूप - सूही काफी व सूही ललित गुरू ग्रंथ साहिब में अंकित हैं । इस राग के गायन का समय दिन का दूसरा पहर है । सिक्ख के 'अनंद कारज' के समय उच्चारण की जाने वाली 'लावां' की बाणी भी इसी राग में दर्ज है ।

16. रागु बिलावल

बिलावल राग प्राचीन भारतीय शास्त्री राग है । वैदिक धर्म के हर ग्रंथ में किसी न किसी रूप में इसका जिक्र मिलता है । यह राग मिलाप के पश्चात् प्राप्त खुशी का प्रकटाव है । गुरू ग्रंथ साहिब में इस राग की बाणी अंग 795 से 858 तक दर्ज है । इस राग के गायन का समय दिन का दूसरा पहर निश्चित है ।

17. रागु गोंड

यह बहुत ही प्रभावशाली राग माना जाता है । पुरातन कीर्तनकार इस राग को बिलाव के साथ मिला कर गाते थे । गुरू ग्रंथ साहिब में इस राग को अंग 859 से 875 तक अंकित किया गया है । इस राग के गायन का समय दिन का दूसरा पहर है ।

18. रागु रामकली

भारतीय परम्परा में इस राग की प्रसिद्धि इसी कारण है कि इसके गायन से होने वाली प्राप्तियों का जिक्र भारतीय धर्म ग्रंथों में बहुत खूबसूरती से किया हुआ है । योगियों का यह सब से महत्वपूर्ण राग था । इस राग का सम्बन्ध करूणा से है । गुरू ग्रंथ साहिब में इसके तहत बाणी अंग 876 से 074 तक दर्ज है । इस राग के गायन का समय सूर्य चढ़ने से लेकर पहले पहर तक का है । महत्वपूर्ण बाणियां 'सिध गोसटि' 'अनुदं' व 'सदु' इसी राग में दर्ज हैं ।

19. रागु नट नाराइन

नट नारइन राग के अधीन गुरू ग्रंथ साहिब में एक अन्य राग स्वरूप भी मिलता है वह है नट । यह सम्पूर्ण जाति का राग है । इस राग के तहत बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 975 से 983 तक दर्ज हैं । इस

राग के गायन का समय रात का दूसरा पहर है ।

20. रागु माली गउड़ा

इस राग को गायन शैली में सब से कइन राग माना जाता है । यह भी धारणा है कि यह राग इस्लाम परम्परा की सूफी धारणा में से आया है । इस राग से सम्बन्धित बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंक 984 से 988 तक दर्ज है । इस राग को खुशी व उल्लास की तरंगें पैदा करने वाला राग माना जाता है । खुशी व उल्लास भी वह जिनका सम्बन्ध दुनियावी नहीं, बल्कि ईश्वरीय हो । यह राग दिन ढ़लते समय गायन किया जाता है ।

21. रागु मारू

मारू राग का सम्बन्ध जोश व बैराग दोनों से माना जाता है । यह राग प्राचीन भारतीय राग परम्परा का प्रमुख राग है और इसे अन्य कई नामों से पुकारा जाता है । इस राग का गायन समय दिन का तीसरा पहर या ढ़लती दोपहर है । इस राग की बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 989 से 1106 तक दर्ज है । इसके दो अन्य प्रकार - मारू काफी व मारू दरवणी भी गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं ।

22. रागु तुखारी

तुखारी राग का जिक्र भारतीय गायन शैली में नहीं मिलता । यह माना जाता है कि इस राग की रचना गुरू नानक पातशाह ने की । इस राग से सम्बन्धित बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1107 से 1117 तक अंकित है । इस राग का गायन समय दिन का चौथा पहर है ।

23. रागु केदारा

केदारा राग भारत का सुप्रसिद्ध राग है तथा भारतीय संगीत का अटूट अंग भी । इस राग में बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1118 से 1124 तक दर्ज है । इस राग का गायन समय रात्रि का पहला व दूसरा प्रहर है ।

24. रागु भैरउ

भैरो राग भी भारतीय राग माला का एक अनमोल मोती है। इस राग में बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1125 से 1167 तक दर्ज है तथा इस राग के गायन का समय प्रात:काल है ।

25. रागु बसंत

मनुष्य का जन्म प्रकृति में से हुआ और यह वनस्पति की छांव में मौला गया, बढ़ा-फूला एवं प्रवान चढ़ा । यह सब कुछ उसके भीतर उमंग पैदा करता है । वनस्पति का खिलना मनुष्य के भीतर नए रंग भरता है क्योंकि वसंत ऋतु उल्लास की ऋतु है तथा ऋतुओं में इसे सब से महत्वपूर्ण स्थान भी प्राप्त है । इस सम्बन्ध में गुरू वाक्य है -

वनसपति मउली चड़िआ बसंतु ॥
इहु मनु मउलिआ सतिगुरू संगि ॥

इस राग की बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1168 से 1196 तक दर्ज है । इस राग के गायन का समय दिन का दूसरा पहर तथा वसंत ऋतु में किसी भी समय गाया जा सकता है । इसकी एक किस्म वसंत हिंडोल भी गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज है ।

26. रागु सारंग

सदियों से भारतीय गायनका यह एक प्रमुख राग है । यह माना जाता है कि इस राग में सर्प भी मस्त हो कर नाच उठते हैं भाव भटकते हुए व्यक्तियों को यह राग शांति तथा शीतलता प्रदान करता है । गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1197 से 1253 तक इस राग से सम्बन्धित बाणी दर्ज है । इस राग को गायन का समय दिन का तीसरा पहर है ।

27. रागु मलार

पुरानी भारतीय कहावत है कि अगर 12 माह में से सावन का महीना निकाल दिया जाए तो पीछे कुछ नहीं बचता । इसका भाव यह है कि मनुष्य जीवन में सावन महीने का महत्वपूर्ण स्थान है, इसीलिए मलार राग का गायन भी सावन व भादों के महीने में ज्यादा किया जाता है । वैसे यह राग रात के तीसरे पहर गाया जाता है पर वर्षा ऋतु में यह किसी भी समय गायन किया जा सकता है । गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1254 से 1293 तक यह राग सुशोभित है । यह राग मनुष्य के भीतर छिपे हाव-भावों की तर्ज़मानी करता है ।

28. रागु कानड़ा

गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1294 से 1319 तक इस राग को स्थान दिया गया है । गायन करने वालों ने इसके अनेक भेद भी कल्पित किए हैं । बेशक इस राग को कइन राग माना गया है, पर इसके बावजूद इसकी लोकप्रियता ज्यों की त्यों है । यह राग रात्रि के दूसरे पहर में गायन किया जाता है ।

29. रागु कलिआण

गुरू ग्रंथ साहिब में कानड़ा राग के बाद राग कलिआण को स्थान दिया गया है और यह अंग 1319 से 1326 तक अंकित है । कलिआण खुशी पैदा करने वाला राग है । इस राग में गुरू राम दास जी व गुरू अर्जुन देव जी की बाणी दर्ज है । गुरू ग्रंथ साहिब के राग भेद अनुसार राग कलिआण भोपाली भी अंकित है । कलिआण और कलिआण भोपाली दोनों भिन्न एवं स्वतन्त्र राग हैं । कलिआण राग का गायन समय रात का पहला पहर है ।

30. रागु प्रभाती

'आदि ग्रंथ' का आखिरी एवं श्री गुरू ग्रंथ साहिब का तीसवां राग 'प्रभाती रागु' है । गुरू साहिब ने सिरी राग को सब से प्रथम स्थान दिया जो इस बात का प्रकटाव है कि जीवन का सफर अंधकार में आरम्भ होता है पर जैसे जैसे यह गुरबाणी से एकसुर होता है तो उसके जीवन की प्रभात चढ़ जाती है, इसीलिए गुरू अर्जुन पातशाह ने इस राग को अन्त में रखा । इसका गायन समय सुबह का पहला पहर है और गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1327 से 1351 तक इस राग में बाणी दर्ज है । गुरू ग्रंथ साहिब के राग भेद अनुसार प्रभाती बिभास प्रभाती दखणी एवं बिभास प्रभाती भी अंकित हैं ।

31. रागु जैजावंती

जीवात्मा सिरी राग से शुरू हुई और प्रभात तक पहुंची । प्रभात आत्मा एवं परमात्मा की एकसुरता का प्रतीक है । जिसकी प्रभात हो गई, उसकी जय जयकार भी दोनों जहान में होती है । जैजावंती राग गुरू ग्रंथ साहिब का अन्तिम राग है और गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1352 से 1353 तक इस राग में केवल गुरू तेग बहादुर साहिब की रचना दर्ज है जो कि गुरू गोबिन्द सिंह जी ने बाद में दमदमा साहिब के स्थान पर दर्ज की । इस राग का गायन समय रात का दूसरा पहर निश्चित किया गया है ।

गुरू ग्रंथ साहिब में आए काव्य रूपों की जानकारी व कुछ विशेष शीर्षक बाणियां

गुरू साहिबान ने गुरू ग्रंथ साहिब में काव्य रूपों का विलक्षण स्वरूप पेश किया है । इनका असल भाव तो काव्य रूपों वाला है पर गुरू साहिबान ने बहुत ही खूबसूरत ढंग से इन्हें काव्य रूपों से अलग करते हुए इनका अध्यात्मिक प्रसंग स्थापित किया है और किसी खास नुकते की ओर संकेत किया है । इनमें छोटी व बड़ी दोनों तरह की रचनाएं हैं, जिनका मुख्य विषय अध्यात्मिक उपदेश है ।

इन बाणियों को हम विस्तारपूर्वक देखने का प्रयत्न करेंगे ताकि गुरू ग्रंथ साहिब का पाठक सुखैन ढंग से इनके काव्य रूप प्रसंग को भी समझ सके और बाणी के भीतर समाये अर्थों से एकसुरता भी स्थापित कर सके । धर्म ग्रंथ बेशक सुखैन कार्य के रूप में स्थापित किया जाता है पर यह शब्द साधारण शब्द न होकर रहस्यात्मक शब्द होते हैं जिनमें गहरे अर्थ छिपे होते हैं ।

गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज काव्य रूप शीर्षकों को विस्तारपूर्वक देख लेना प्रसंग युक्त होगा ।

1. पदा

आम करके छंत के एक भाग को ही पदा कहा जाता है । गुरूबाणी में पदे का प्रयोग बंद के लिए भी किया गया है । इसमें दो बंद वाले शब्द 'दुपदे' तीन बंद वाले 'तिपदे' चार बंद वाले 'चउपदे' और पंच बंद वाले शब्द को 'पंचपदे' का नाम दिया गया है । असल में जो भी काव्य रूप मात्रा के नियम में आ जाता है, उसे 'पद' की संज्ञा दी जाती है ।

गुरबाणी में 'इकतुके' शीर्षक के नीचे अनेक शब्द मिलते हैं । जिस शब्द में हरेक पद में मिलते तुकांत वाली दो छोटी छोटी पंक्तियां हो, पर उन्हें इक्ट्ठे एक तुक की तरह बोलने से एक सम्पूर्ण विचार बनती हो, उसे 'इकतुका' कहा जाता है । जिस शब्द में हरेक पदे में मिलते जुलते तुकांत वाली तीन-तीन तुकें हों, उसे 'तितुका' कहा जाता है ।

2. असटपदी

भारतीय काव्य रूपों में अष्टपदी का अपना विलक्षण महत्व है । गुरू पातशाह ने परम्परागत रूप को पूर्ण तौर पर नहीं अपनाया क्योंकि परम्परा में आठ पदों वाले कोई भी रचना अष्टपदी कहलाती है पर गुरू ग्रंथ साहिब में इसके कई विलक्षण रूप हैं, इसीलिए कहा जाता है कि गुरू ग्रंथ साहिब ने परम्परा में से समझाने के लिए किसी रूप का प्रयोग किया है तो उसे उसी प्रकार अपनाने का प्रयत्न नहीं किया बल्कि उसे अपने अनुसार पेश किया है, जैसे गुरू ग्रंथ साहिब में अष्टपदी दो पंक्तियों से लेकर आठ, दस और यहां तक कि बीस-बीस पदों वाली भी हैं । गुरू ग्रंथ साहिब के प्रथम राग में गुरू नानक साहिब एवं गुरू अमरदास जी की अष्टपदियां तीन पंक्तियों में ही मिली हैं और पंचम पातशाह की सुखमनी साहिब में दस दस पंक्तियों वाले पदे भी हैं ।

3. सोलहे

आम तौर पर जो भी रचना 16 पदों वाली होती है उसे 'सोलहा' कहा जाता है परन्तु गुरू साहिब के सम्पादन की विलक्षणता यह है कि उन्होंने इस बंधन को कई जगह स्वीकार नहीं किया क्योंकि गुरू ग्रंथ साहिब में 9, 15 और यहां तक कि 21 पदों में भी 'सोलहे' को दर्ज किया गया है । इन बाणियों का विषय सँसार की उत्पति

तथा उसके विकास से जुड़ा है और प्रभु की सृजना की हुई दुनिया की सुन्दरता का बहुत ही सुन्दर वर्णन भी है ।

4. छंत

भारतीय परम्परा में इस काव्य रूप को आम करके औरतों के गीतों से जोड़ा गया था और इन गीतों का सम्बन्ध प्रेम या विरह के साथ था । गुरू पातशाह ने यही प्यार का प्रकटाव परमात्मा से करके जीव को स्त्री रूप में पेश किया जो अपने प्रेमी से बिछुड़ी हुई है और उसमें लीन होने के लिए तत्पर है । उसकी याद उसे व्याकुल करती है और व्याकुलता में वह अपने प्रीतम की सेजा को मानने के लिए उसका इन्तजार करती है ।

5. सलोक

भारतीय परम्परा में किसी की उत्पति में की गई बात या बोले गये शब्दों को श्लोक कहा जाता है जैसे यश के छंत को श्लोक कहते हैं । यह बहुत ही पुराना काव्य रूप है और गुरू ग्रंथ साहिब में इसका बहुत खूबसूरती से ब्यान किया गया है । गुरबाणी में पदों के पश्चात् सब से ज्यादा रूप सलोकों के ही हैं ।

6. वार

पंजाबी भाषा का यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण काव्य रूप है । इसके शाब्दिक अर्थ हैं जोशीले गी जिसमें किसी सूरमे–योद्धाओं की बहादुरियों का वर्णन किया गया हो । ये वीर–रस प्रधान रचनाएं हैं और गुरू ग्रंथ साहिब में इनकी संख्या 22 है । इनमें से 21 वारों का सम्बन्ध गुरू साहिबान से है तथा एक वार गुरू घर के कीर्तनकार भाई सता व बलवंड की रामकली राग में है ।

गुरू नानक साहिब द्वारा 3 वारें राग माझ, आसा व मलार में दर्ज हैं ।गुरू अमरदास जी की 4 वारें राग गूजरी, सूही, रामकली व मारू में दर्ज हैं । गुरू राम दास जी की 8 वारें सिरी राग, गउड़ी, विहागड़ा, वरहंस, सोरइ, बिलावल, सारंग व कानड़ा राग में दर्ज है । गुरू अर्जुन देव जी द्वारा रचित 6 वारें राग गउड़ी, गूजरी, जैतसरी, रामकली, मारू व वसंत में हैं । सते बलवंड की वार व बसंत की वार के इलावा अन्य हरेक वार की पउड़ियों के साथ गुरू साहिबान के सलोक भी दर्ज हैं ।

7. मंगल

मंगल के शाब्दिक अर्थ आनन्द, खुशी व उत्साह है । गुरू ग्रंथ साहिब में मंगल का प्रयोग शीर्षक के रूप में दो बार किया गया है – छंत बिलावल महला 4 मंगल व बिलावल महला 5 छंत मंगल । इस शीर्षक के नीचे दर्ज बाणी खुशी के भावों को ही रूपमान करती है । बेशक इन शीर्षकों के इलावा मंगल शब्द का प्रयोग बहु–अर्थो में भी हुआ है ।

8. थिती व थिंती

थिती का भाव तिथी तारीख या समय है । गुरू ग्रंथ साहिब में गुरू नानक पातशाह व गुरू अर्जुन देव जी की रचनाएं इस शीर्षक के नीचे दर्ज हैं । असल में इन दोनों रचनाओं का मूल भाव भारतीय परम्परा के लोगों को थित–वारों की उलझन से बाहर निकालना और शुभ काज्ञान कराना था। गुरू साहिब ने भ्रम के मुकाबले भक्ति, ज्ञान, सेवा व सिमरन का उपदेश दिया और हर समय को पवित्र स्वीकार किया।

भगत कबीर जी की एक रचना 'थिंती' है जो गउड़ी राग में दर्ज है । इसमें भगत कबीर जी ने पुरानी रूढ़ियां व

भ्रमों का नाश कर प्रभु के नाम सिमरन को ही असल राह बताया है ।

9. दिन – रैनि

गुरू अर्जुन पातशाह का एक शब्द इस महत्वपूर्ण काव्य रूप शीर्षक के नीचे दर्ज है । इस शब्द में परम्परागत कर्म – काण्डों को छोड़ कर परमात्मा के साथ जुड़ने और शुभ कर्म करने के लिए हर समय सक्रिय रहने का उपदेश दिया गया है । असल में इस बाणी काभाव यह लगता है कि मनुष्य दिन रात अकाल पुरख का नाम जपते हुए स्वयं अकाल पुरख का रूप हो जाए ।

10. वार सत

पंजाबी संस्कृति में इस काव्य रूप को 'सत वार' (सात वार) के नाम से जाना जाता है । जिसका भाव है सप्ताह के सात दिन । इन दिनों को आधार बनाकर किसी विशेष भावना का प्रकटाव किया जाता है । संस्कृत में इसी शब्द को अवसर या मौके के रूपमें लिया जाता है । अध्यात्मिक महापुरूषों द्वारा इस 'सतवारे' को अपने भीतर की प्यास के प्रकटाव का माध्यम बनाया गया है । इसके द्वारा वे इश्क – हकीकी का वर्णन करने की कोशिश करे हैं पर साथ में यह स्वीकार करते हैं कि इस ईश्वरीय प्यार को वे शब्दों में ब्यान करने में असमर्थ हैं क्योंकि इश्क – खुदाई महसूस करना है, ब्यान करना नहीं । गुरू ग्रंथ साहिब में 'वार सत' नाम की दो रचनाएं हैं, गुरू अमरदास जी व भगत कबीर जी की । इन दोनों रचनाओं का शीर्षक मनुष्य को तिथि – वारों के अंधविश्वास में से बाहर निकालने से सम्बन्धित है ।

11. रुती

'रुती' से भाव ऋतु है । गुरू ग्रंथ साहिब में इस काव्य रूप का प्रयोग गुरू अर्जुन पातशाह ने किया है जिसमें छः ऋतुओं का वर्णन है । इसमें परमात्मा को मिलने के भिन्न भिन्न पड़ावों का जिक्र है और उससे बिछुड़ने से पैदा होने वाली चाह को भी प्रकट किया है । इस चाह का केवल एक हल है परमात्मा का सिमरन ।

12. बारह माहा

यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण काव्य रूप है । इसका सम्बन्ध विरहा से है । गुरू ग्रंथ साहिब में इस शीर्षक के नीचे दो रचनाएं दर्ज हैं – तुखारी राग में गुरू नानक देव जी की तथा माझ राग में गुरू अर्जुन पातशाह की । यहां बेशक विछोड़ा व रिह है पर इसका स्वरूप दुनियावी नहीं बल्कि अध्यात्मिक है । इन रचनाओं में कुदरत में बदलते पसारे को प्रतीक के रूप में लेते हुए मनुष्य के भीतर उठती विहवलता व भीतरी बदलाव का खूबसूरत ढँग से वर्णन किया गया है ।

13. पटी

पटी का शाब्दिक अर्थ फट्टी या तख्ती हैजिसके ऊपर बच्चे वर्णमाला लिख कर सीखते हैं । इसी को ही काव्य रूप प्रदान करते हुए पँजाब में पट्टी कहा जाने लगा । फारसी व सँस्कृत दोनों में ही इसके रूप मिलते हैं जिन्हें 'सीहरफी' व 'बावन अखरी' कहा जाता है । गुरू ग्रंथ साहिब में इस नाम की दो रचनाएं आसा राग में दर्ज हैं जिनका सम्बन्ध गुरू नानक पातशाह व गुरू अमरदास जी से है । असल में 'पटी' में हर पंक्ति लिपि के अक्षर से शुरू होती है । इस रचना का विषय दार्शनिक सिद्धांतों से जुड़ा हुआ है । जीव के परमात्मा को मिलने की राह और उस राह पर चलने से प्राप्तियां और मार्ग – दर्शक के रूप में गुरू की आवश्यकता की महिमा का इसमें वर्णन है। सिक्ख परम्परा के अनुसार गुरू नानक साहिब ने विद्यालय में प्रवेश करने के उपरान्त पांधे (अध्यापक) को

पढ़ाने के लिए 'पटी' की रचना की ।

14. बावन अखरी

52 अक्षरों की व्याख्या और इन अक्षरों को आधार बना कर दिए गए उपदेशों वाली रचना को 'बावन अखरी' का नाम दिया गया है । गुरू ग्रंथ साहिब में इस शीर्षक से दो रचनाएं - गुरू अर्जुन पातशाह था भगत कबीर जी की मिलती हैं जो कि गउड़ी राग में दर्ज है । गुरू अर्जुन देव जी की इस रचना की 55 पउड़ियां हैं तथा पउड़ियों के प्रारम्भिक अक्षरों का उच्चारण गुरमुखी वर्णमाला का है। भग कबीर जी की रचना के 45 छंत हैं । इस रचना में बेशक 52 अक्षरों का प्रयोग नहीं किया गया पर काव्य रूप करके इसे 'बावन अखरी' कहा जाता गया है ।

15. सदु

'सदु' के काव्य रूप प्रबन्ध में अनेक अर्थ किए गए हैं । आम करके 'सदु' उसे कहा जाता था जब किसी भी फिरके का विरक्त साधु किसी गृहस्थी के द्वार पर गजा करने हेतु लम्बी आवाज़ लगाता था । गुरबाणी में प्रायः इसका प्रयोग ईश्वरीय बुलावे के लिए किया गया है । 'सदु' एक विशेष बाणी का शीर्षक भी है जो बाबा सुन्दर जी की रचना है और इस बाणी का सम्बन्ध गुरू अमरदास जी के अन्तिम समय किए उपदेशों से हैं ।

16. काफी

'काफी' शब्द का सम्बन्ध अरब देश की भाषा के साथ है और इसके शाब्दिक अर्थ हैं पीछे चलना । इस्लाम धर्म के फकीर प्रायः इसे प्रभु स्तुति करते हुए गाया करते थे और उनके पीछे पीछे उनके पैरोकार गायन करे थे । शब्दार्थ श्री गुरू ग्रंथ साहिब ने इसे एक रागनी स्वीकार किया है ।

17. डखणा

इस शीर्षक के नीचे गुरू अर्जुन देव जी की बाणी दर्ज है । यह कोई छंत नहीं है पर यह गुरू नानक देव जी की जन्मभूमि से दक्षिण की ओर की भाषा है । वहां के लोग प्रायः 'द' के स्थान पर 'ड' का प्रयोग करते थे । दक्षिणी पँजाब में इसका अर्थ सूत्रवान किया जाता है । इन अर्थो के अनुसार ऊँटों वाले अपनी यात्रा के दौरान जो गीत ऊँची सुर लगा कर गाते, उन्हें 'डखणे' कहा जाने लगा ।

18. गाथा

गुरू ग्रंथ साहिब में सहसीकृति सलोकों के पश्चा् 'गाथा' का प्रयोग किया गया है । असल में यह एक छंत रूप है। छंत का भाव प्रायः गायन से भी लिया जाता है जो किसी विशेष प्रसंग (गाथा) को गीत रूप में पेश करता है । गुरू ग्रंथ साहिब में गाथा रचना द्वारा मनुष्य को अवगुण छोड़ने और परमात्म नाम से जोड़ने के साथ साथ परमात्मा के नाम सिमरन की प्राप्तियों का ब्यौरा भी दिया गया है ।

19. फुनहे

भारतीय परम्परा में खुशी के समय के गीत भाव बच्चे का जन्म, दुल्हे व दुल्हन की तैयारी आदि के समय गायन किए जाने वाले गीतों को 'फुनहे' कहा जाता है । गुरू ग्रंथ साहिब में हर समय को मंगलमयी समझा जाता है तथा उपदेश किया गया है कि हर समय उस प्रीतम प्यारे की स्तुति में गायन करना ताकि 'इह लोक सुखीई परलोक सुहेले' का प्रसंग स्थापित हो सके ।

20. सलोक सहसकृति

यह उन सलोकों का शीर्षक है जो सँस्कृत भाषा की रंगत को रूपमान करते हैं । गुरू साहिब के समय कई भाषाओं का प्रयोग होता था जिनमें धार्मिक लोग प्राय: गाथा या सहसकृति का प्रयोग करते थे । यह प्राय: सारे हिन्दुस्तान में ही समझी जाती थी । अगर बहुत ही सरल ढँग से इसे ब्यान करना हो तो हम कह सकते हैं कि देशी व सँस्कृत का मिलाजुला रूप सहसकृति है । गुरू पातशाह ने इन सलोकों में जहाँ कर्मकाण्डों का निषेध किया है, वहाँ प्रभु से एकसुरता कायम करने और सामाजिक रिश्तों की नाशमानता को रूपमान किया है । इसके साथ ही मनुष्य जीवन का एक ही निशाना 'गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ' निश्चित किया है ।

21. सलोक वारां ते वधीक

गुरू ग्रंथ साहिब के भीतरी स्वरूप से स्पष्ट है कि इसमें 22 वारें दर्ज हैं । वारों में सलोक दर्ज करने के बाद जो सलोक बच गए, उन्हें एक अलग शीर्षक दिया गया जिसे 'सलोक वारां ते वधीक' कहा जाता है । इन सलोकों का विषय भिन्न भिन्न है और हरसलोक विषय के पक्ष में पूर्ण तौर पर स्वतन्त्र है ।

गुरू साहिब ने बेशक इन काव्य रूपों को माध्यम के रूपमें अपनाया पर उन्होंने उन्हें अपना रूप व अपने अर्थ दिए, जिससे उनका सम्बन्ध केवल काव्य रूप न हो कर 'लोगु जानै इहु गीतु है इहु तउ ब्रहम बीचार' का प्रसंग स्थापित कर दिया । उपरोक्त शीर्षकों के अलावा गुरू ग्रंथ साहिब में कुछ और महत्वपूर्ण शीर्षक भी हैं जिनका सम्बन्ध बाणी गायन से है । इन शीर्षकों पर निगाह डाल लेना भी वाजिब़ होगा ।

1. धुनी

धुनी का शाब्दिक अर्थ है ध्वनि, स्वरों का आलाप, गूंज, गाने का ढंग । पंचम पातशाह गुरू अर्जुन देव जी ने 'आदि ग्रंथ के सम्पादन के समय 9 ऐसी वारें चुनी जिनके ऊपर गायन का विधान दर्ज किया है । इन 9 धुनियों के ऊपर ही छठे पातशाह गुरू हरिगोबिंद साहिब ने रबाबियों से वारों का गायन करवा सिक्खों में वीर रस पैदा किया।यह 9 धुनियां इस प्रकार हैं -

1. *वार माझ की तथा सलोक महला 1* — *अंग 137*
   मलक मुरीद तथा चंद्रहड़ा की धुनी गावणी
2. *गउड़ी की वार महला 5* — *अंग 318*
   राइ कमालदी मोजदी की वार की धुनि उपरि गावणी ।
3. *आसा महला 1 वार सलोका नालि* — *अंग 462*
   सलोक भी महले पहिले के लिखे टुंडे अस राजै की धुनी
4. *गूजरी की वार महला 3* — *अंग 508*
   सिकंदर बिराहिम की वार की धुनी गाउणी
5. *वडहंस की वार महला 4* — *अंग 585*
   लला बहलीमा की धुनि गावणी
6. *रामकली की वार महला 3* — *अंग 947*
   जोधै वीरै पूरबाणी की धुनी
7. *सारंग की वार महला 4* — *अंग 1237*

राइ महमे हसने की धुनी

8. *वार मलार की महला 1* *अंग 1278*

राणे कैलास तथा मालदे की धुनी

9. *कानड़े की वार महला 4* *अंग 13 12*

मूसे की वार की धुनी

2. पउड़ी

गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज वारों के कई छंत 'पउड़ी' शीर्षक के नीचे भी दर्ज देखे जा सकते हैं । पउड़ी एक प्रकार का छंत प्रबन्ध है । इस में विशेष करके युद्ध की वारें रची जाती हैं । भाई गुरदास जी की वारों के छंत भी 'पउड़ी' के नाम से ही प्रसिद्ध हैं ।

3. पड़ताल

पड़ताल का सम्बन्ध गायन से है। पड़ताल से भाव है पटताल, चार ताल का भेद । कीर्तन में ताल को बार बार परताए जाने को पड़ताल कहा जाता है । गुरू ग्रंथ साहिब जी में आया शीर्षक 'पड़ताल' इस बात का सूचक है कि इस शब्द के गायन समय शब्द के हर अंतरे में तबले की ताल बदलतनी है ।

4. घर

घर का सम्बन्ध भी कीर्तन से है । गुरमति संगीत में इसे दो अर्थों में देखा गया है - ताल व स्वर । गुरूग्रंथ साहिब में 1 से 17 तक घर लिखे मिलते हैं । इससे गायन करने वाले को सूचना मिलती है कि इस शब्द को इस राग के अमुक नम्बर के स्वर-प्रसार अनुसार गायन करना है । गुरू ग्रंथ साहिब में शब्दों के शीर्षक पर आए 'घरु' से भाव है इस शब्द का गायन किस घर में होना है ।

5. रहाउ

यह माना जाता है कि शब्द का केन्द्रीय सम्बन्ध 'रहाउ' की पंक्ति में होता है । रहाउ का अर्थ टेक या स्थायी है तथा वह पद जो गायन करे समय बार बार अंतरे के पीछे प्रयोग किया जाता है ।

6. रहाउ दूजा

एक शब्द में जहाँ स्थायी के लिए दो पंक्तियाँ रची हैं, वहाँ इस पद का प्रयोग किया है, और दोनों में गायन करने वाले की मर्जी है कि जिस टेक को चाहे प्रयोग कर ले ।

7. जति

जैसे आया है 'बिलावल म, 1 थिती घर 10 जति' - यह जति संकेत है तबले वाले के लिए कि उसने इस शब्द के गायन समय बायां हाथ तबले से उठा कर खुला बजाना है । इस तरह 'गति' होता है जब दायां हाथ किनारे पर रव कर हरफ निकाले तथा साथ या कड़कट तब होत है जब दोनों हाथ खुल कर बजें ।

इन उपरोक्त शीर्षकों के इलावा गुरू ग्रंथ साहिब में कुछ अन्य शीर्षक भी प्रयोग किए गए हैं जैसे पहिरिआ के घरि गावणा, जुमला, जोड़, सुध, सुध कीचै आदि ।

अंक अंकण प्रबन्ध

गुरू ग्रंथ साहिब का सब से खूबसूरत पहलू यह है कि इसमें किसी किस्म का बढ़ाव-घटाव करना सम्भव

ही नहीं है । प्रत्येक राग में बाणी अंकित करते समय हरेक गुरू साहिबान द्वारा उच्चारण किए शब्द, अष्टपदियां, छंत, सोलहे आदि की संख्या दी गई है और अन्त में कुल जोड़ दिया गया है, ताकि कहीं बढ़ाव-घटाव न किया जा सके । यही तरतीब भगत साहिबान की बाणी अंकित करते समय प्रयोग की गई है । उदाहरण के लिए -

सिरीरागु महला 1 (33)

सिरीरागु महला 3 (33) (31) (64)

सिरीरागु महला 4 (33) (31) (6) (70)

सिरीरागु महला 5 (30) (100)

गुरबाणी कीर्तन की चौकियां

श्री हरिमन्दिर साहिब अमृतसर में निम्न लिखित कीर्तन चौकियां सजाई जाती हैं -

1. तीन पहरे की चौकी
2. आसा की वार की चौकी
3. बिलावल की पहली चौकी
4. अनंद की चौकी
5. चरण कंवल की चौकी
6. सोदर से पहले की चौकी
7. आरती की चौकी
8. कलिआण की चौकी
9. कानड़े की या कीर्तन सोहिले की चौकी

तथा हर कीर्तन चौकी में चार चरण होते हैं - शान, मंगलाचरण, शब्द गायन व पउड़ी । शब्द गायन में धुपद, ख्याल, अंस व रहाउ होते हैं ।

विशेष शीर्षक बाणियां

गुरू ग्रंथ साहिब की बनावट के खूबसूरत अध्याय से जुड़ने के लिए बाणी माध्यम है । गुरू ग्रंथ साहिब में जिस खूबसूरती से इन सभी बाणियों को शीर्षक प्रदान किए गए हैं, उन बाणियों की तरतीब को जान लेना बेहद आवश्यक हो जाता है । सो जहां हम इन शीर्षकों की बात करेंगे, वहीं उस बाणी के प्रसंग को भी संक्षेप में प्रकट करने का प्रयत्न करेंगे और साथ ही उस बाणी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की ओर भी एक नज़र डालेंगे ।

1. जपु

गुरू ग्रंथ साहिब का आरम्भ 'जपु' बाणी से होता है जिसका सिक्ख धर्म में बेहद महत्व है तथा यह नितनेम की बाणी है । यह बाणी गुरू नानक पातशाह द्वारा रचित है और यह गुरू ग्रंथ साहिब का बीज रूप है । इस बाणी की 38 पउड़ियां व 2 सलोक हैं । एक सलोक बाणी के आरम्भ में तथा दूसरा बाणी के अन्त में है । ੴ से आरम्भ में परमात्मा के स्वरूप की व्याख्या है जिसे मूलमंत्र कहा जाता है । मूलमंत्र के पश्चात् बाणी का शीर्षक 'जपु' अंकित किया गया है । यह बाणी राग युक्त है । इस बाणी का केन्द्रीय भाव अकाल पुरख, मनुष्य एवं समाज है । मनुष्य को प्रभु के घर का वासी बनाने हित भाव भाव 'सचिआर' पद की प्राप्ति के लिए उसका मार्ग निर्देशन

किया गया है । इस अवस्था की प्राप्ति के लिए जहां सुनने, मानने व पंच का राह दर्शाया है, वहां साथ ही पाँच खण्डों द्वारा अध्यात्मिक प्राप्ति के शिखर को रूपमान किया गया है ।

2. सो दरु

गुरू ग्रंथ साहिब में जपु बाणी के बाद 'सो दरु' शीर्षक से बाणी दर्ज है । 'सो दरु' का शब्द गुरू ग्रंथ साहिब में तीन बार अंकित किया गया है । प्रथम बार यह जपु जी की 27वीं पउड़ी के रूप में गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 6 पर दर्ज है, दूसरी बार मामूली फर्क के साथ अंग 8 के ऊपर तथा तीसरी बार राग आसा में अंग 347 के ऊपर । इस बाणी का मूल भाव प्रभु के घर की महिमा का वर्णन है ।

3. सो पुरखु

'सो पुरखु' से भाव परमेश्वर है क्योंकि वह ही सब से बड़ा व उत्तम पुरख है, जो स्वतंत्र, शक्तिमान, सृजनहार व सदीवी है । यह पाँच पदों की रचना है तथा इसमें परमात्मा के गुणों का सम्पूर्ण तौर पर वर्णन किया है ।

4. सोहिला

'सोहिला' का शाब्दिक अर्थ आनन्द, खुशी या प्रशंसा है । गुरूग्रंथ साहिब में यह बाणी अंग 12 पर अंकित है तथा यह सिक्ख के नितनेम की बाणी है । इस बाणी में महला 1, महला 4 व महला 5 की बाणी दर्ज है । इस बाणी का भाव-अर्थ परमात्मा से बिछुड़ी जीवन स्त्री व उससे मिलाप तथा मिलाप के बाद की खुशियां का प्रकटाव है । इस बाणी में परमात्मा से मिलाप का मार्ग बताया गया है ।

5. वणजारा

गुरू राम दास जी द्वारा रचित बाणी 'वणजारा' गुरू ग्रंथ साहिब के सिरी रागु में अंग 80 पर अंकित है । इस रचना में मनुष्य का आगन बनजारे के रूप में कल्पित किया गया है । यहां मनुष्य उसी प्रकार धर्म कमाने आता है जैसे बनजारा अपने माल को बेचने के लिए कोशिशें करता है । अगर सच का व्यापारी बन कर, सच का व्यापार करके जीव यहां से जाएगा तो परमात्मा के राह की सभी भ्रांतियां समाप्त हो जाएंगी, जिन्दगी उल्लासमय बन जाएगी तथा वह अलौकिक गुणों का धारणी हो सफल बनजारे के रूप में नाम धन का व्यापारी हो जाएगा ।

6. करहले

यह रचना गुरू राम दास जी की है जो कि गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 234 पर दर्ज है । ऐतिहासिक प्रसंग में करहले ऊँटों के ऊपर व्यापार करने वाले व्यापारियों के लम्बे गीत थे जिसमें वे सफर का अकेलापन, थकावट तथा घर की याद का वर्णन करते हुए चलते जाते थे । सब से अगला ऊँठ - सवार गायन शुरू करता और पीछे उसके साथी उसका साथ देते । इसका भाव यह है कि जैसे व्यापारियों का कोई और इकाना नहीं होता, घूमते-घूमते वे अपनी ज़िन्दगी बसर करते हैं, इसी प्रकार मनुष्य जब परमात्मा के गुणों का धारणी नहीं बनता, अपने मन के पीछे चलता है तो उसका भी इकाना एक नहीं रहता । वह आवागन में उलझ जाता है क्योंकि मन का चंचल स्वभाव उसे उसी तरह उलझाए रखता है जैसे व्यापारी थोड़े से लाभ के पीछे और आगे से आगे बढ़ता जाता है ।

यह रचना स्पष्ट करती है कि ज़िन्दगी लालच नहीं है, ज़िन्दगी 'मन तूं जोति सरूपु है आपणा मुलु पछाणु'

है जिसने मूल पहचान लिया, उसका आवागवन मिट गया । इच्छाओं पर काबू पाना और परमात्मा से एकसुरता ही ज़िन्दगी का असल सच है ।

7. सुखमनी

यह गुरू अर्जुन पातशाह की एक बड़े आकार की बाणी है । इसकी 24 पउड़िया व 24 असटपदियां हैं । यह गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 262 पर मउड़ी राग में दर्ज है । 'सुखमनी' का शाब्दिक अर्थ सुखों की मणी है । इसकी प्राप्ति इस बाणी की रहाउ की पंक्ति से स्पष्ट है ।

सुखमनी सुख अमृत प्रभ नामु ।।
भगत जना कै मनि बिस्राम ।।

इस रचना में अन्तिम सुख या बड़ा सुख परमात्मा का मिलाप बताया है और यह भी स्पष्ट किया है कि किसी भी सुख की प्राप्ति का मार्ग कठिन होता है तथा कठिन मार्ग को पार करने के लिए संघर्ष करने की जरूरत पड़ती है । परमात्मा तक पहुंचने का राह बेशक कठिन है पर उस कठिन मार्ग को संयमी वृतियों को धारण कर स्थायी सुख की प्राप्ति की जा सकती है ।

8. बिरहड़े

गुरू अर्जुनदेव जी द्वारा रचित यह बाणी आसा राग में गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 431 पर सुशोभित है जैसे इसके शीर्षक से ही स्पष्ट है कि वियोग या विरह में तड़पती रूह के वलवलों का प्रसंग रूपमान होता है । बिछुड़ना मौत है, मिलाप जीवन है और मिलाप के लिए अच्छे गुण वाहन बन जाते हैं ।

9. अलाहणीआ

इस शीर्षक के अधीन गुरू नानक पातशाह व गुरू अमरदास जी की बाणी गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज है । भारतीय परम्परा में अलाहुणियों का प्रयोग मृतक प्राणी के लिए किया जाता था जिसमें एक औरत उसके गुणों को रूमान करती और बाकी औरतें उसके पीछे विलाप करती । इन्हें शोकमई गीत स्वीकार किया जाता है । गुरू साहिबान ने परम्परागत रवायत को अस्वीकार करते हुए यह बताया कि परमात्मा ही इस जगत का कर्ता, पालनहार व खात्मा करने वाला है । साथ ही मनुष्य थोड़े समय के लिए है । जब मनुष्य की हस्ती स्थायी नहीं तो फिर उसके गुण गायन करने का क्या अर्थ । गुण गायन केवल अकाल पुरख के ही किए जा सकते हैं । असल में इस बाणी द्वारा मौत के भय को दूर करके निर्भय पद की प्राप्ति की ओर बढ़ने का संकेत है ।

10. आरती

'जन्मसाखी' के अनुसार गुरू नानक साहिब अपनी उदासियों के दौरान जगन्नाथपुरी पहुंचे तो वहां मन्दिरों में एक खास प्रतीक रूप में की जाती आरती को नकारते हुए कुदरती रूप में हो रही आरती का वर्णन किया । आरती का शाब्दिक अर्थ प्रार्थना किया जाता है । असल में वैदिक परम्परा के अनुसार यह देवता को खुश करने की विधि है । गुरू साहिब ने इस बाणी में बताया कि कुदरत के इस विलक्षण प्रसार में सारी कायनात उस परमात्मा की आरती कर रही है, केवल इसको देखने वाली आंख की आवश्यकता है ।

11. कुचजी

इस शीर्षक के नीचे गुरू नानक पातशाह द्वारा रचित केवल 16 पंक्तियां हैं । यह रचना गुरू ग्रंथ साहिब में सूही राग में अंग 762 पर अंकित हैं तथा इसका विषय परमात्मा से बेमुख हुई लोकाई है । स्त्री रूप में 'कुचजी'

शब्द का प्रयोग करते हुए गुरू साहिब ने बताया है कि जैसे कुचजी स्त्री अपने अवगुणों के कारण अपने पति के प्यार से वंचित रह जाती है, उसी तरह की कुचजी जीव-स्त्री सांसारिक कार-व्यवहार सुख-आराम में खचित हो, हर प्रकार के विकारों में उलझी रहती है और अपने मूल से टूट कर पापों की भागीदार बनी रहती है ।

12. सुचजी

गुरू ग्रंथ साहिब के सूही राग में सुशोभित यह रचना गुरू नानक साहिब की है । सुचजी का शाब्दिक अर्थ अच्छा, शुभ, पवित्र है । इसमें जीव का स्त्री रूप में प्रकटाव करते हुए उसके सुचजे (अच्छे) गुणों को रूपमान किया है और सामाजिक व्यवहार द्वारा यह प्रकट किया है कि कैसे समझदार स्त्री अपने कार-व्यवहार से अपने पति को प्रसन्न कर उसके प्यार को प्राप्त कर लेती है । इसी प्रकार जीव-स्त्री नैतिक कंदरों-कीमतों को धारण कर अकाल पुरख के रंग में रंगी जा सकती है ।

13. गुणवंती

गुरू अर्जुन साहिब द्वारा रचित गुरू ग्रंथ साहिब के सूही राग में दर्ज इस बाणी का मूल भाव संयमी वृतियों के द्वारा परमात्मा का गुण गायन करना और उन गुणों को अंगीकार करने के लिए आत्म समर्पण एवं नम्रता जैसे गुणों को अपनी जिन्दगी का अंग बना लेना है । ऐसी अवस्था ही प्रभु से मिलाप का रास्ता खोजती है ।

14. घोड़ीआ

गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 575 पर वडहंस राग में गुरू राम दास जी की यह रचना 'घोड़ीआ' दर्ज है । इस रचना की ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि शादी के समय घोड़ी पर चढ़ने से जाकर जुड़ती है और दूल्हे के घोड़ी पर चढ़ते समय गीत गायन किए जाते हैं । इसी रूप को प्रतीक की तरह प्रयोग करते हुए गुरू साहिब फरमाते हैं कि जैसे दूल्हे को दुल्हन के घर ले जाने का माध्यम घोड़ी है, उसी तरह ही मनुष्य देह, आत्मा को परमात्मा से मिलाने का माध्यम है, जैसे दूल्हे वाली घोड़ी का श्रृंगार किया जाता है, उसी प्रकार देह का श्रृंगार नाम-सिमरन व नैतिक गुणों को अंगीकार करने से होता है जो मन की चंचलता को लगाम डाल गुरू घर की ओर मोड़ कर ले जाने में समर्थ होते हैं ।

15. पहरे

'पहरे' रचना का मूल आधार वक्त, पहर या समय है । पहर का भाव दिन या रात का चौथा हिस्सा है । इस शीर्षक से गुरू नानक देव जी, गुरू राम दास जी व गुरू अर्जुन देव जी द्वारा रचित बाणी गुरूग्रंथ साहिब में दर्ज है, जैसे मानव जिन्दगी को चार हिस्सों में बांटा जाता है उसी प्रकार इस बाणी द्वारा प्रथम हिस्सा माता का गर्भ, दूसरा जन्म के उपरान्त बचपन, तीसरा जवानी व चौथा बुढ़ापे का वर्णन किया गया है, जैसे पहर चुपचाप बी जाता है, उसी प्रकार ही मानव जीवन भी गुजरता जाता है लेकिन पता तब चलता है जब वक्त गुजर चुका होता है । इस बाणी में जीव को बनजारे के रूप में सम्बोधित किया गया है । बनजारा वह है जो अपनी कमाई को सफल करके लौटे । जो अपनी कमाई को सफल करने में असमर्थ होता है, उसे बनजारा नहीं गिना जाता । यह मनुष्य जीवन भी बनजारे के समान है जहां मनुष्य सामाजिक कार-व्यवहार करता हुआ परमात्मा से जुड़ने के लिए आता है । यह कर्म-भूमि असल में 'नाम बीज सुहागा' है । जो रूहें इस सच को जान लेती हैं, वह ईश्वरीय रूप हो जाती है और जो असफल रहती हैं, उनकी भटकन सदा बनी रहती है ।

16. अनंदु

'अनंदु' गुरू अमरदास जी की प्रमुख बाणी है जो 'रामकली महला 3 अनुदं' शीर्षक से गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 917 पर दर्ज है । अनंद का शाब्दिक अर्थ खुशी या प्रसन्नता किया गया है । इस सारी रचना का भाव आनन्द पर केन्द्रित है तथा इस बाणी की 40 पउड़िया हैं । इस बाणी में यह रूपमान किया गया है कि साँसारिक सुखों का आनन्द क्षण-भंगुर है पर असल आनन्द प्रभु से एकसुरता है । प्रभु से एकसुरता के बाद स्थायी आनन्द की प्राप्ति हो जाती है । सिक्ख धर्म परम्परा में इस बाणी की 6 पउड़िया - पहली पाँच व अन्तिम का गायन नियम से प्रत्येक कार्य में किया जाता है ।

17. ओअंकार

यह गुरू नानक पातशाह की बाणी राम रामकली में गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 929 पर सुशोभित है । ओअंकार परमात्मा नाम है । सैद्धान्तिक पक्ष से हम बाणी में परमात्मा को वाहिद मालिक (Ultimat Reality) दर्शाया है तथा उसके विशाल गुणों का प्रकटाव भी किया है ।

18. सिद्ध गोसटि

यह गुरू नानक पातशाह की बहुत ही महत्वपूर्ण रचना है जो सिक्ख धर्म के सिद्धान्त को सम्पूर्ण रूप में सामने लाती है । वह सिद्धान्त है -

जब लगु दुनीआ रहीऐ नानक,किछु सुणीऐ किछु कहीऐ ।।

गोसटि का भाव है बातचीत, चर्चा, गोष्ठि या वार्ता और वार्ता भी उत्तम पुरूषों की । वार्तालाप कहने व सुनने की प्रक्रिया है । गुरू नानक पातशाह ने इस बाणी द्वारा अंतर-धर्म संवाद की बुनियाद रखी है । बुद्ध धर्म का एक सम्प्रदाय जो आध्यात्मिक बुलंदियों की शिखर पर थे लेकिन सामाजिक कार्य-व्यवहार से पूर्णतया विरक्त हो चुके थे, 'सि गोसटि' उन सिद्ध-योगियों से वार्तालाप है । इसमें जहाँ गम्भीर दार्शनिक संकल्पों का आलेख है, वहीं सामाजिक प्रसंग की स्थापना का भी बहुत ही खूबसूरत ढँग से वर्णन हुआ है और यह भी बताया गया है कि समाज को उत्तम बनाने के लिए उत्तम पुरूषों की आवश्यकता होती है । यह भारतीय भांजवादी नीति के विरोध में सक्रिय सामाजिक जिन्दगी जीने का एक विभिन्न प्रसंग की स्थापना है । इसे गुरबाणी के इस प्रमाण से स्पष्ट किया जा सकता है कि जब सिद्धों ने सवाल किया कि गृहस्थी हो कर उदासी जीवन क्यों धारण किया है तो गुरू नानक साहिब ने बहुत खूबसूरत ढँग से जवाब दिया -

गुरमुखि खोजत भए उदासी ।।
दरसन कै ताई भेख निवासी ।।
साच वखर के हम वणजारे ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 939)

यह बाणी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 938 पर अंकित हैं ।

19. अंजुलीआ

'अंजुली' का भाव विनय है । भारतीय परम्परा में देवी-देवताओं व पितरों को फूल लेकर अर्पण करना और विनती करने की एक रवायत थी । इस शीर्षक से गुरू अर्जुन पातशाह ने बाणी रचना की है जिसमें मनुष्य को उपदेश दियाहै कि सब कुछ अकाल पुरख की रज़ा में है तथा इसीलिए सम्पूर्ण समर्पण ही केवल एक रास्ता है । इस बाणी में परमात्मा के हुक्म तथा रज़ा को बहुत ही खूबसूरत ढँग से पेश किया है और 'मेला संजोगी राम'

का प्रसंग स्थापित किया है । यह बाणी गुरूग्रंथ साहिब के अंग 1019 पर सुशोभित है ।

20. मुदावणी

पंचम पातशाह का यह शब्द 'मुंदावणी' शीर्षक के तहत गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1429 पर दर्ज है । भारतीय परम्परा के अनुसार किसी बड़े राजा-महाराजा को भोजन छकाने से पूर्व उसके लिए तैयार किए भोजन को किसी खास बर्तन में डाल कर मुन्द दिया जाता था । मुन्द का भाव सील करना था ताकि उसके भोजन में मिलावट न हो सके । गुरूग्रंथ साहिब रूपी थाल सत्य, संतोष व विचार से परोस दिया है और इसे तैयार करे समय अमृत नाम का प्रयोग किया गया है । कोई भी जिज्ञासु इस अमृत रूपी थाल को बिना किसी भय के भुंच सकता है, भाव सहज रूप से इसका मंथन करके प्रभु एवं मनुष्य के बीच की दूरियां हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त हो सकती है । प्रभु और मनुष्य की दूरी खत्म होने से गुरमति का असली प्रसंग स्थापित हो जाता है ।

21. राग माला

गुरू ग्रंथ साहिब के अन्त में अंग 1429 व 1430 पर राग माला दर्ज है । राग माला से भाव है ऐसी रचना जिसमें रागों की नामावली हो, राग व उनके परिवार अर्थात किस्म दर किस्म का विवरण हो ।

गुरू ग्रंथ साहिब में आए बाणीकारों की तरतीब

गुरू ग्रंथ साहिब में अनेक भाषाओं के शब्द मौजूद हैं लेकिन इन का प्रकटाव गुरमुखी लिपि में किया गया है । गुरू ग्रंथ साहिब में अंकित बाणी की भाषा पंजाबी, सधूकडी, प्राकृत, अपभ्रंश, बृज, अवधी, गुजराती, मराठी, बंगला व फारसी आदि के शब्दों का मिश्रण है ।

पंचम पातशाह गुरू अर्जुन देव जी एक ऐसे धर्म ग्रंथ की सम्पादना करना चाहते थे जो राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय सरहदों को तोड़ता हुआ साँसारिक स्तर पर स्थापित हो, इसीलिए जहाँ इसमें गुरू साहिबान की बाणी अंकित की गई, वहाँ साथ ही हिन्दू भगतों व मुसलमान पीर-फकीरों की बाणी कोभी योग्य स्थान देकर सम्मान दिया गया।

गुरू ग्रंथ साहिब में 6 गुरू साहिबान, 15 भगत साहिबान, 11 भट व 4 गुर सिक्ख - कुल 36 बाणीकारों की बाणी शामिल है।

इस तरह यह सँसार का प्रथम ऐसा धर्म ग्रंथ है जिसमें न केवल भिन्न भिन्न धर्मो बल्कि भिन्न भिन्न सभ्याचारों, बोलियों व जातियों के मनुष्यों को स्थान देकर मानव सम्मान को शिखर पर पहुंचाया गया है । गुरू ग्रंथ साहिब में बाणी अंकित करने की केवल एक कसौटी, गुरू नानक पातशाह के सिद्धान्त हैं, ना कि जाति की उत्तमता, इसीलिए जहाँ भगत रविदास जी चमार जाति से सम्बन्धित हैं, वहीं भगत रामानन्द जी ब्राह्मण हैं लेकिन गुरू घर जन्म उत्तमता को नकारता है और बौद्धिक उत्तमता को स्वीकार करता है।

गुरू ग्रंथ साहिब में बाणीकारों को प्रत्येक राग आरम्भ होने पर एक क्रम में रखा गया है -

1. पहले गुरू साहिबान की बाणी क्रम अनुसार
2. फिर भक्तों की बाणी
3. भट्टों की बाणी
4. गुर सिक्ख बाणीकारों की रचना

गुरू साहिबान

गुरू साहिबान की सारी बाणी 'नानक' छाप से दर्ज है लेकिन यह बताने के लिए कि यह बाणी किस गुरू साहिबान की है, 'महला' शब्द का प्रयोग किया गयाहै ।

'महला' अरबी भाषा के शब्द हलूल से लिया माना जाता है । हलूल का अर्थ है - उतरने का स्थान । दूसरा 'महला' के अर्थ शरीर के लिए भी किए जाते हैं ।

गुरू ग्रंथ साहिब में पहले पाँच गुरू साहिबान व नौवें गुरू साहिब की बाणी दर्ज है -

महला 1 का भाव	श्री गुरू नानक दे वजी
महला 2 का भाव	श्री गुरू अंगद देव जी
महला 3 का भाव	श्री गुरू अमर दास जी
महला 4 का भाव	श्री गुरू राम दास जी
महला 5 का भाव	श्री गुरू अर्जुन देव जी
महला 9 का भाव	श्री गुरू तेग बहादुर जी

गुरू नानक देव जी

सिक्खव धर्म के संस्थापक गुरू नानक देव जी का प्रकाश 1469 ईस्वी में राए भोई की तलवंडी (ननकाणा साहिब) में महता कालू व माता तृप्ता जी के घर हुआ । पिता का सम्बन्ध अमीर परिवार से था व पेशा पटवारी का था। आप की, आप से बड़ी एक बहन थी जिसे सिक्खव इतिहास में बेबे नानकी के नाम से याद किया जाता है। आप जी का बचपन गाँव में ही बीता जहाँ आप ने पंडित गोपाल, बृज लाल व मौलवी जी से शिक्षा ग्रहण की ।

'जन्मसाखवी' के अनुसार आप जी की महत्वपूर्ण रचना 'पटी' विद्यालय जाने के पहले दिन व उम्र के सातवें वर्ष में लिखवी गई थी। पहली बार अध्यापक को विद्यार्थी 'पैंती' (वर्णमाला के पैंतीस अक्षर) के अर्थ समझा रहा है। अध्यापक बच्चे का मुँह ताक रहा है व अवस्था सुन्न हो गई है । बच्चे की उम्र और अर्थो की गहराई हैरानी पैदा कर रही है । अध्यापक बच्चे को लेकर महता कालू के पास पहुँचा और बालक को पढ़ाने से इन्कार कर दिया । साथ ही, कहा, 'पढ़े हुए को कौन पढ़ाए ! बाबा जी ! यह दुनिया को पढ़ाए ।'

नौ वर्ष की उम्र में जनेऊ की रस्म से इन्कार एवं 'सच्चे सौदे' का व्यापार करके पिता का क्रोध चरम-सीमा पर पहुंच गया। अठारह वर्ष की उम्र में पिता को एक ही रहा आप का विवाह नज़र आया और माता सुलखवणी का चुनाव आप की जीवन-साथिन के रूप में कर दिया गया । दो साहिबजादे बाबा सिरी चंद व लखवमी दास पैदा हुए पर गुरू साहिब न स्वभाव से बदले व न कर्म से।

अन्त में भाई जयराम जी की सपुर्दगी में आप जी को सुल्तानपुर लोधी भेज दिया गया। भाई जय राम, बेबे नानकी के पति थे व सुल्तानपुर के हुक्मरान के विश्वास पात्र थे । भाई जयराम के प्रभाव से आप जी को मोदी खवाने में नौकरी प्राप्त हुई पर 'तेरा तेरा' के आलौकिक नाद ने जहाँ लोगों को धन्य किया, वहाँ विरोधियों ने मुँह में ऊँगलियां डाल ली । सरकारे-दरबारे शिकायत हुई,पड़ताल हुई लेकिन हिसाब ठीक निकला । फिर गुरू साहिब ने चाबियां हाकम की दहलीज़ पर रखवीं और ईश्वरीय ज्योति का सिमरन करते हुए वेईनदी जा पहुँचे। आप वहाँ

से स्नान उपरान्त बाहर आए व ऐलान किया : 'ना को हिन्दू न मुसलमान'।

इस रहस्य कोसमझने वालों ने सिर झुका लिया तथा दूसरों ने नानक को 'कमला' गर्दाना । इसकी पुष्टि गुरू साहिब करते हुए फरमाते हैं -

कोई आखै भूतना की कहै बेताला ।।

कोई आखै आदमी नानकु बेचारा ।। (गु. ग्रं. अंग 991)

अब उदासियों का आरम्भ था व भाई मरदाना का संग । सँसार की चारों दिशाओं की ओर सच, धर्म व प्रभु की आह भरी । उदासियों के उपरान्त आप ने करतारपुर नगर बसाया, खेती शुरू कर दी और एक प्रभु, एक मानवता और एक समाज का उपदेश दिया । आपने संगत व लंगर क प्रथा कायम की ।

करतारपुर में ही 'लहिणा' नाम का एक व्यक्ति गुरू चरणों की धूल प्राप्त कर 'गुरू अंगद' बन गया। गुरू नानक साहिब ने भाई लहिणा को अपने जीवनकाल में ही गुरगद्दी प्रदान कर यह बता दिया कि विरासत की कसौटी योग्यता है, जन्म नहीं ।

गुरू नानक देव जी 1539 ईस्वी में करतारपुर में ही ज्योति-जोति समा गए ।

बाणी रचना : 974 शब्द, 19 रागों में

प्रमुख बाणियां : जपु, पहरे, वार माझ, पटी, अलाहणीआ, कुचजी, सुचजी, थिती, ओअंकार, सिध गोसटि, बारह माहा, आसा की वार व वार मलार ।

गुरू अंगद देव जी

1504 ईस्वी को मत्ते की सराय नाम के गाँव में पिता फेरूमल व माता दया कौर जी के घर एक बालक का जन्म हुआ जिसका नाम 'लहिणा' रखा गया । पिता जी का व्यवसाय दुकानदारी का था और इलाके के खुशहाल परिवार के रूप में जाने जाते थे । भाई लहिणा जी का बचपन सतलुज व व्यास नदियों के संगम के ऊपर कुदरत की गोद में खेलते हुएव्यतीत हुआ।

1519 ईस्वी को आप जी का विवाह बीबी खीवी से सम्पन्न हुआ। कुछ समय पश्चात् आप जी के पिता चल बसे और आपने अपनी दुकानदारी का पेशा अपने ससुराल गाँव में आकर करना शुरू कर दिया। आप जी के घर दो साहिबजादे (बाबा दासू व दातू) तथा दो साहिबजादियां (बीबी अमरी व बीबी अनोखी) पैदा हुए । पिता फेरूमल पूरी तरह हिन्दू धर्म को समर्पित थे व ज्वाला जी के अनन्य भक्त थे। आप ने पिता जी के सँस्कारों को ग्रहण किया व देवी को पूर्ण तौर पर समर्पित हो गए । आप हर वर्ष ज्वाला जी जाते पर मन की बहिबलता घटने की बजाए बढ़ती गई ।

आध्यात्मिक भूख की तृप्ति गुरू नानक पातशाह की हजूरी में दूर हुई । गुरू साहिब ने कहा, 'भाई लहिणा! तुम्हारा ही इन्तज़ार था' । इस गहरी रमज़ की समझ उस समय भाई लहिणा को न आई परन्तु गुरू बचन सुन लहिणा नानक व नानक लहिणा हो गये।

भाई लहिणा गुरू नानक साहिब की परखों के समक्ष थे, परीक्षा पूर्ण हुई । गुरू पातशाह आप उठे व भाई लहिणा को गुरगद्दी के सिंहासन पर सुशोभित किया, परिक्रमा की, माथा टेका और संगत में जा बैठे । फिर बाबा बुढ्ढा जी द्वारा गुरता की रस्म सम्पूर्ण हुई और भाई लहिणा 'गुरू अंगद' के रूप में गुरगद्दी के वारिस बने ।

गुरू नानक पातशाह ने गुरू अंगद साहिब को खडूर जाने का हुक्म किया और कहा, 'शब्द सिद्धान्त से संगत को जोड़ो' । खडूर पहुँच कर गुरू अंगद देव जी सिक्खी के प्रचार प्रसार के लिए कार्यशील हुए और लंगर में माता खीवी की नियुक्ति ने औरत के सम्मान को शिखर पर पहुँचा दिया। जन्मसाखी व सिक्ख सिद्धान्त को लिखने की परम्परा चला कर आपने अहम भूमिका निभाई । आप ने बच्चों की पाठशाला, मल अखाड़े व गुरमुखी लिपि की शोध-सुधाई कर प्रमाणिक रूप दे कर यह समझा दिया कि इस नवोदित धर्म की अपनी लिपि होगी जो 'गुरमुखी' के नाम से जानी जाएगी ।

इस प्रकार सिक्खी के इस विशिष्ट रूप को और आगे बढ़ाते हुए 48 वर्ष की आयु में 1552 ईस्वी को खडूर साहिब में आप ज्योति-जोति समा गए और गुरू नानक ज्योति गुरू अमरदास जी में स्थापित कर तृत्तीय गुरू की उपाधि देकर उन्हें गोइंदवाल जाने का हुक्म कर गए ।

बाणी रचना : 63 श्लोक

गुरू अमर दास जी

1479 ईस्वी को बासरके गाँव में पिता तेजभान जी व माता राम कौर जी के घर (तृत्तीय गुरू) अमरदास जी का जन्म हुआ। आप जी का खानदानी पेशा व्यापार व खेती था। पिता वैदिक धर्म के धारणी थे और हिन्दू रीति-रिवाज से आप का अटूट विश्वास था । यही विश्वास और परम्परा को अमरदास जी ने ग्रहण किया व पिता की तरह आप हरिद्वार जाने व दान, व्रत व पुण्य की क्रिया भी पूर्ण करने लगे ।

आपजी के भतीजे के साथ गुरू अंगद पातशाह की साहिबजादीबीबी अमरों का विवाह हुआ था । उन्हीं से ही आप ने गुरू पातशाह की बाणी सुनी, तन-मन में ऐसी ठंडक महसूस की कि गुरू अंगद पातशाह के चरणों पर गिर पड़े और फिर उन्हीं के हो कर रह गए ।

गुरू नानक पातशाह की बाणी के साथ आप जी की रूह ऐसी शरसार हुई कि न बुढ़ापे का कोई असर था और न ही कुड़माचारी की कोई झिझक । गुरू अंगद पातशाह की पारखी नज़र ने परख लिया कि गुरगद्दी का असली उत्तराधिकारी आ पहुँचा है, पर इसके बावजूद परख हुई जिसमें आप पूर्ण उतरे । 1542 ईस्वी में 63 वर्ष की आयु में बाबा बुढ्ढा जी के हाथों से आप को गुरगद्दी पर बिठाया गया और आप जी को गोइंदवाल जा कर प्रचार करने का हुक्म हुआ ।

गुरू अमरदास जी ने सिर झुका कर हुक्म की तामील की और गेइंदवाल जाकर विराजमान हुए । आप ने गुरू नानक पातशाह के सिद्धान्त को आगे बढ़ाया । आप जी ने संगत, लंगर व सेवा को परिपक्व किया, मंजी व पीढ़ों की स्थापना की और सती प्रथा व पर्दे की मनाही के आदेश दिए । साथ ही आप ने यह हुक्म जारी कर दिया कि लंगर में प्रशादा लिए बिना कोई भी गुरू दरबार में हाज़री नहीं भरेगा । आप ने गोइंदवाल में बाउली की उसारी कर तथा 'चक्क गुरू दी' पर मोहर लगा कर सिक्ख धार्मिक केन्द्रीय स्थान की ओर संकेत कर दिया । लगभग 95 वर्ष की आयु में आप 1574 ईस्वी को गोइंदवाल में ही ज्योति-जोति समा गए और सिक्खी के वारिस के रूप में 'भाई जेठा' जी को चुना, जो बाद में गुरू रामदास जी के नाम से गुरगद्दी पर सुशोभित हुए ।

बाणी रचना : 869 शब्द, 17 रागों में

प्रमुख बाणियां : अनंद, पटी तथा 4 वारें - राग गूजरी, सूही, रामकली व मारू में

गुरू राम दास जी

भाई जेठा जी (गुरू राम दास जी) का जन्म 1534 ईस्वी में लाहौर शहर में हुआ । आप जी के पिता जी का नाम हरदास व माता जी का नाम दया कौर था । आप का सम्बन्ध सोढी कुल से था और पारिवारिक व्यवसाय दुकानदारी था । सात वर्ष की उम्र में ही माता पिता का साया आपके सिर से उठ गया । आप की गरीब नानी आप को अपने पास बासरके ले आई और यहाँ ही आप की पहली मुलाकात तृत्तीय गुरू हजूर से हुई ।

भाई जेठा के लिए पहला कर्म गुरू घर की सेवा थी, पर इसके साथ-साथ वृद्ध नानी की जिम्मेवारी का अहसास भी था, इसीलिए जीविका के लिए पहले आप घुंघणियां (उबले चने) बेचते और कमाई नानी जी के हवाले कर गुरू घर पहुँच जाते । गुरू अमरदास साहिब आप को बहुत गौर सेदेखते और गुरू घर की सेवा में जुड़े इस नौजवान में गुरू साहिब को सिक्खी का अगला वारिस नज़र आने लगा। गुरू पातशाह ने अपनी साहिबजादी बीबी भानी के साथ आप का विवाह कर आप को गले से लगाया। उस समय भाई जेठा की आयु 19 वर्ष हो चुकी थी । विवाह के पश्चात् आप के घर तीन पुत्र पैदा हुए - बाबा पृथीचंद, महादेव व (गुरू) अर्जुन देव । 1574 ईस्वी में तीसरे पातशाह ने गुरू राम दास जी को गुरगद्दी की बखशीश कर गुरू पद पर सुशोभित कर दिया ।

तीसरे पातशाह ने गुरू के चक्क की जिम्मेवारी पहले ही आप जी को सौंप दी थी । आप गुरगद्दी पर विराजमान होने के उपरान्त वहां ही जा बसे और शहर में 52 भिन्न भिन्न व्यवसायों के लोगों को बसाया। यह सिक्ख इतिहास में पहला नगर है जो किसी नदी के तट पर नहीं है । गुरू रामदास जी ने दो सरोवर - रामसर व संतोखसर की खुदाई का कार्य भी आरम्भ किया। सिक्ख धर्म के पैरोकारों की संख्या में उस समय तक बहुत बढ़ावा हो चुका था, इसीलिए आपने मसंद प्रथा की स्थापना की । इनका कार्य दूर दूर के क्षेत्रों में जा कर गुरू नानक जी के सिद्धान्त का प्रचार करना था ।

गुरू रामदास जी की संगीत को बहुत बड़ी देन है । आप जी ने 30 रागों में बाणी का उच्चारण किया और इन रागों की प्रवीनता व परिपक्वता में बहुत मूल्यवान योगदान डाला ।
गुरू पातशाह ने जब अनुभव कर लिया कि समय पास आ चुका है तो संगत को बुलाया व कहा कि गुरू रूप में अर्जुन देव ही उनके मार्गदर्शक होंगे । फिर बाबा बुढ्ढा जी को हुक्म हुआ कि गुरगद्दी सौंपने की रस्म निभाई जाए । परम्परागत ढंग से आपने गुरू अर्जुन देव जी की परिक्रमा की, माथा टेका और आप संगत रूप हो गए । अब सिक्खी के पौधे को पालने पोसने की जिम्मेवारी पाँचवे पाशाह के रूप में गुरू अर्जुन देव जी पर सुशोभित थी ।

बाणी रचना : 638 शब्द, 30 रागों में

प्रमुख बाणियां : 8 वारे - सिरी रागु, गउड़ी, बिहागड़ा, वडहंस, सोरइ, बिलावल, सारंग व कानड़ा राग में, घोड़ीआ, पहरे, करहले, बणजारा तथा सूही राग में सिक्ख के 'अनुद कारज' के समय पढ़ी जाने वाली लावां की बाणी ।

गुरू अर्जुन देव जी

गुरू अर्जुन देव जी का प्रकाश 1563 ईस्वी को श्री गुरू रामदास जी व माता भानी जी के घर गोइंदवाल के स्थान पर हुआ । बचपन में आप को अपने नाना तीसरे गुरू अमरदास जी को गोद में खेलने का मौका प्राप्त हुआ । तीसरे पातशाह ने आप के लिए 'दोहिता बाणी का बोहिथा' का उच्चारण करते हुए आने वाले समय की

ओर संकेत कर दिया था । फिर नौजवान अवस्था में आप का विवाह माता गँगा जी से सम्पन्न हुआ । आप के घर एक बालक ने जन्म लिया जिसका नाम (गुरू) हरिगोबिंद रखा गया ।

1581 ईस्वी में आप पाँचवे गुरू के रूप में गुरगद्दी पर सुशोभित हुए । आप ने गुरू पिता जी के आरम्भ किए कार्यो को हाथ में लिया और संतोखसर व अमृतसर नाम के सरोवर सम्पूर्ण कर 'चक्क रामदास' का नाम 'अमृतसर' रख दिया तथा सरोवर के बिल्कुल बीच में 'हरिमन्दिर' का निर्माण कर, सिक्खों को उनका केन्द्रीय स्थान अर्पित कर दिया । आप जी ने तरन-तारन, हरिगोबिन्दपुर, छेहरटा, करतापुर आदि शहर बसा, सिक्खी के प्रचार व प्रसार केकई केन्द्र स्थापित कर दिए ।

गुरू अर्जुन पातशाह तक सिक्खी का प्रचार व प्रसार इस हद तक बढ़ चुका था कि समय के हाकम व समकालीन धर्म इस धर्म को लोक लहर के रूपमें देखने लगे तथा लोक लहर भी ऐसी जो कि शोषित से स्वतन्त्रता का प्रसंग सृजना कर रही हो। इसका नतीजा यह निकला कि इस लोक लहर के मुखिया बागी करार कर दिए गए और 1606 ईस्वी को गुरू पातशाह पर कई तरह के इल्जाम लगा कर लाहौर में आप जी को शहीद कर दिया गया । आप सिक्ख धर्म के प्रथम शहीद थे ।

बाणी रचना : 2312 शब्द, 30 रागों में

प्रमुख बाणियां : सुखमनी, बारह माहा, बावन अखरी, गुणवंती, अंजुलीआ, बिरहड़े व 6 वारें - राग गउड़ी, गूजरी, जैतसरी, रामकली, मारू व बसंत राग में

गुरू तेग बहादुर जी

1621 ईस्वी में गुरू के गहल, अमृतसर में ठछे गुरू, गुरू हरिगोबिन्द साहिब व माता नानकी जी के घर (गुरू) तेग बहादुर का जन्म हुआ। आप जी की परवरिश की जिम्मेवारी बाबा बुढ्ढा जी व भाई गुरदास जी जैसी देवी रूहों की देखरेख में हुई । बाबा बुढ्ढा जी ने जहां बचपन से आप जी को नानक नूर से शरसार कर दिया था, वहीं आप को सैनिक गुणों व जंगी हुनरों में भी प्रवीण कर गुरू पि जैसी शूरवीर शख्सीयत तैयार कर दी थी । भाई गुरदास जी ने आप को धर्मो के दार्शनिक पक्षों का गहरा ज्ञान कराते हुए ब्रज, सँस्कृत, पँजाबी आदि भाषाओं से पूरी तरह अवगत करा दिया था ।

आप 1635 ईस्वी में छठे पातशाह के साथ कीरतपुर साहिब आ बसे और गुरू पिता के ज्योति-जोति समाने के बाद आप ने अपनी माता नानकी जी व पत्नि गूजरी जी के साथ बाबा बकाला में निवास कर लिया ।

आठवें पातशाह गुरू हरिकिशन साहिब ने ज्योति-जोति समाने से पूर्व संगत को 'बाबा बकाले' का हुक्म दिया था । यहां ही भाई मक्खण शाह लुबाणा ने 22 मंजियों पर बैठे पाखण्डियों का पाज उखाड़ कर 'गुरू लाध ो रे' का नारा दिया । गुरू साहिब इन ढोंगियों की कलह को देखते हुए कीरतपुर चले गए और वहाँ से पाँच मील की दूरी पर माखोवाल के स्थान पर जगह खरीद कर अनंदपुर शहर बसा दिया ।

आप जी ने सिक्खी के प्रचार हित दूर-दूर तक यात्राएं की । इन यात्राओं से सिक्ख धर्म को बहुत बल मिला और सिक्ख धर्म की सिफ्त-सालाह देश के कोने कोने तक फैल गई ।

औरंगजेब की कट्टरवादी नीतियों से दुखी हो कश्मीरी पंडितों काएक वफद अनंदपुर साहिब पहुँचा और उन्होंने गुरू साहिब के आगे बचाव के लिए विनती की । सिक्ख धर्म के 'जो शरण आए तिस कंठ लाए' के वाक्य

को सच करते हुए गुरू साहिब 1675 ईस्वी को दिल्ली में अपने तीन सिक्ख-भाई मती दास, भाई सती दास व भाई दयाला जी के साथ शहादत का जाम पी गए और 'हिन्द की चादर' कहलवाए ।

बाणी रचना : 116 शब्द, 15 रागों में

भक्त बाणी

मनुष्य के परमात्मा के साथ रागात्मक सम्बन्धों को भक्ति कहा जाता है । 'भक्त' शब्द सँस्कृत भाषा के 'भज्' धातु से सम्बन्धित माना जाता है । 'भज्' का अर्थ है जपना, आराधना, पूजना, सेवा, सिमरन व बाँटना आदि । अगर सरल शब्दों में बताना हो तो कहा जा सकता है कि भक्त जन वह है जो परमात्मा के सिमरन से जुड़ कर, समूह कायनात में कादर का रूप देखता है, उसकी सेवा करता है और बाँट कर खाता है ।

इसके अतिरिक्त भक्त शब्द को अक्षरों में विच्छेद करके भी अर्थ किए जाते हैं, जैसे 'भ' अक्षर प्रेम (भाव) से, 'ग) अक्षर ज्ञान (गिआन) से व 'त' अक्षर त्याग से सम्बन्धित स्वीकार किया गया है और माना यह गया है कि जिस भी मनुष्य में यह तीन गुण विद्यमान हो, वह भक्त जन है ।

भक्ति लहर दक्षिण भारत में आरम्भ हुई । इसका मान आडवार भक्तों को जाता है । उत्तरी भारत में इसका आगमन मध्य युग में हुआ। भक्तजनों ने असल में एक प्रभु के संदेश को प्रचलित करते हुए कर्मकांडी प्रबन्ध को पूरी तरह नकारने की कोशिश की ।

भक्त, भट्टों तथा अन्य बाणीकारों की पहचान के लिए जिस भी महापुरूष की बाणी है, उनका नाम भी गुरू ग्रंथ साहिब में साथ ही दर्ज किया गयाहै । इन भक्तों के जीवन तथा बाणी बयौरे को हम विस्तारपूर्वक देखने का प्रयत्न करेंगे ।

भक्त कबीर जी

भक्त कबीर जी शिरोमणी भक्त हुए हैं । उत्तरी भारत को भक्ति के रंग में रंगने वाली इस पवित्र रूह का जन्म 1398 ईस्वी में हुआ माना जाता है । आप जी के जन्म सम्बन्धी कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिलता पर आप की परवरिश नीरू नाम के एक श्रमिक मुसलमान जुलाहा व उसकी पत्नि नीमा द्वारा हुई ।

कबीर जी के विवाह के बारे में आपकी रचना का अध्ययन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि आपने गृहस्थ जीवन व्यतीत किया और आप के घर संतान भी पैदा हुई ।

भक्त कबीर जी के जन्म के समय सम्पूर्ण हिन्दुस्तान की धार्मिक व सामाजिक व्यवस्था दो श्रेणियों में बंटी हुई थी, जिसमें पहली श्रेणी शोषणकारियों की थी और दूसरी श्रेणी शोषितों की । पहली श्रेणी में राजकर्त्ता व पुजारी वर्ग आता था और दूसरी श्रेणी में जनसाधारण । भक्त कबीर दूसरी श्रेणी से सम्बन्धित थे लेकिन उन्हें यह शोषण मंज़ूर नहीं था ।

फलस्वरूप भक्त कबीर जी की आवाज़ एक मनुष्य की आवाज़ न हो कर समूह की आवाज़ हो गई और यह आवाज़ लोक लहर का रूप धारण कर दंभियों व पाखण्डियों को नंगा कर लोक मानसिकता में एक नई रूह का आगाज़ करते हुए 1518 ईस्वी में इस सँसार से कूच कर गई ।

सिक्ख धर्म के संस्थापक गुरू नानक पातशाह स्वयं इस 'लोक की आवाज़' के पास पहुँचे, शाबाश दी और

इस आवाज़ को लुप्त होने से बचा कर हमेशा हमेशा के लिए गुरू ग्रंथ साहिब का हिस्सा बना दिया ।

बाणी कुल जोड़ : 532, 16 रागों में

प्रमुख बाणियां : बावन अखरी, सत वार, थिती

भक्त रविदास जी

अपने इतिहास व विरासत के गौरव को सम्भालने की प्रवृति भारीतीय जन जीवन में हमेशा अलोप रही है । यही कारण है कि विरासत का बहुत गौरव अपनी खुशबू फैलाने की बजाये पर समय के चक्कर में दफन हो कर रह गया। भक्त रविदास जैसा क्रान्तिकारी युग-पुरूष की न तो जीवन तिथि के बारे में कुछ मिलता है और न ही पारिवारिक पृष्ठभूमि की जानकारी ।

गुरू नानक पातशाह की ईलाही नज़र ने इस हीरे को पहचाना और सिक्ख धर्म में इनकी रचना को शामिल कर इतिहास में शाश्वत कर दिया ।

यह निश्चित है कि इनका जन्म बनारस के आसपास के किसी स्थान पर हुआ और आप का सम्बन्ध चमार जाति से था । इसका प्रकटाव गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज इनकी बाणी करती है ।

नागर जनाँ मेरी जाति बिखिआत चंमारं ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1293)

ऊँची जाति के लोगों द्वारा जो दुर्व्यवहार निचले वर्ग से किया जाता था, उसका स्पष्ट उल्लेख इनकी बाणी से हो जाता है । ब्राह्मण की कर्मकांडी ज़िन्दगी, वर्ण धर्म का दंभी व शोषणकारी चेहरा, हुक्मरान का दुराचारी रूप तथा जन साधारण का इन्हीं हालातों में ज़िन्दगी जीना, यह इनकी रचना में स्पष्ट नज़र आता है । सामाजिक दंभ की पाज उखाड़े जाने के अलावा आप जी की बाणी में परमात्मा के प्यार का पात्र बन 'बेगमपुरा' की स्थापना, कर्मकांड की विरोधता, संयमी जीवन और विष-विकारों का बहुत ही खूबसूरत ढँग से वर्णन किया गया है ।

बाणी कुल जोड़ : 40 शब्द, 16 रागों में

भक्त धन्ना जी

भक्त धन्ना जी राजस्थान के किसान परिवार से सम्बन्धित थे जिन्हें जाट कबीले के तौर पर भारतीय समाज में मान्यता प्राप्त है । भाई काहन सिंह नाभा के अनुसार आप का जन्म टांक इलाके के गाँव धुआन में 1416 ईस्वी में हुआ। धन्ना जी ने गृहस्थी जीवन व्यतीत किया और पारिवारिक कार्य खेतीबाड़ी ही अपनाया । एक जाट और दूसरा किसान का जीवन होने के कारण बारीक चालाकियों से उनकी ज़िन्दगी कोसो दूर थी । कइन श्रम और परमात्मा से प्यार, जिन्दगी के दो ही निशाने थे । निर्मल स्वभाव वाले धन्ना परमात्मा की दरगाह में कबूल हुए । इसका प्रसंग स्थापन गुरू अर्जुन पातशाह अपनी बाणी में इस प्रकार करते हैं ।

धन्नै सेविआ बाल बुधि ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1192)

भक्त धन्ना जी की बाणी का मुख्य विषय है कि मनुष्य परमात्मासे जुड़ने के लिए सही रूपमें स्वभाव पैदा नहीं करता, इसीलिए वह तृष्णाकी आग में जलता है और जन्म-मरण के भवजल जाल में उलझा रहता है । आप की बाणी के अनुसार विष-विकारों के रस एकत्रित कर मन को जीवन ने इस कद्र भर लिया है कि पैदा करने वाला बिसर गयाहै । अगर गुरू मत में ज्ञान का धन भर दे तो प्राप्तियों का मार्ग खुल जाता है और सहज अवस्था

की प्राप्ति होती है ।

भक्त जी नेअपनी बाणी में स्पष्ट कर दियाहै कि मुझे धरती के आसरे (प्रभु) की प्राप्ति संतो, महापुरूषों की संगत के कारण ही हुई है ।

धन्नै धनु पाइआ धरणीधरु मिलि जन संत समानिआ । (गु. ग्रं. सा. अंग 487)

बाणी कुल जोड़ : 3, 2 रागों में

भक्त पीपा जी

भक्त बाणी शीर्षक के अधीन दर्ज बाणियों में भक्त पीपा जी का एक शब्द राग धनासरी में गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 695 पर दर्ज है । इनके बारे में मान्यता है कि यह राजस्थान के राजपूत राजा थे और एक छोटी सी रियासत गगरौन गढ़, इनके अधिकार में थी । बहुत जल्दी ही राजशाही की विलासिता से इनका मन भर गया और इनकी उदासीनता ने घर वालों की चिन्ता में बढ़ावा किया । इन्हें समझाने की प्रक्रिया शुरू हुई लेकिन असफल रही ।

इनके चित मेंएक इच्छा प्रबल हो गई कि प्रभु क्या है और ईश्वरीय मेल कैसे होता है ? इस प्रबलता ने इनके दिनों का चैन व रातोंी नींद खराब कर दी और आप ने सब कुछ भुला दिया। माना जाता है कि इस अवस्था में आप का मेल स्वामी रामानंद जी से हुआ। आप ने इनके प्रवचन सुने, शांति मिली तथा हाथ जोड़ कर विनती की कि शिष्य बना लो । हुक्म हुआ कि इतनी जल्दी है तो कुएं में छलांग मार दो । यह शब्द सुनते ही आप कुएं की ओर दौड़ पड़े लेकिन छलांग मारने से पहले ही भक्त रामानंद जी के चेलों ने पकड़ लिया और रामानंद जी ने इन्हें छाती से लगा लिया।

भक्त पीपा जी ने अपने शरीर को मन्दिर की संज्ञा देकर बाणी की रचना की है, जो इस प्रकार है –

कायउ देवा काइअउ देवल काइअउ जंगम जाती ।।
काइअउ धूप दीप नईबेदा काइअउ पूजहु पाती ।।
काइआ बहु खंड खोजते नव निधि पाई
ना कछु आइबी ना कछु जाइबी राम की दुहाई ।। रहाउ ।।
जो ब्रहमंडे सोई पिंडे जो खोजै सो पावै ।।
पीपा प्रणवै परम ततु है सतिगुरू होइ लखावै ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 695)

स्पष्ट है कि देवी देवताओं की पूजा के स्थान पर निराकार ब्रह्म को अपने हृदय में खोजने का प्रसंग आप की बाणी में से मिलता है ।

भक्त परमानन्द जी

भक्त परमानन्द जी भी गुरूग्रंथ साहिब के योगदानियों में से एक है । इनका एक शब्द राग सारंग में गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 1253 पर अंकित है। भक्त परमानन्द जी के जन्म, जन्म स्थान व माता पिता के बारे में प्रमाणिक जानकारी नहीं मिलती लेकिन यह प्रमाणित है कि मध्यकाल के आप उच्च कोटि के भक्तजन थे ।

भक्त परमानन्दजी का जो शब्द गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज है, उसमें मनुष्य को केन्द्रीय बना कर उसके भीतर के विकारों का व्याख्यान करके उसे असली जीवन की प्राप्ति के लिए सचेत किया है और उसका राह साध संगत

की सेवा व उपमा बताया है –

तै नर किआ पुरानु सुनि कीना ॥
अनपावनी भगति नही उपजी भूखैदानु न दीना ॥1॥ रहाउ
कामु न बिसरिओ क्रोधु न बिसरिओ लोभु न छूटिओ देवा ॥
पर निंदा मुख ते नहीं छूटी निफल भई सभ सेवा ॥
बाद पारि घरु मूसि बिरानी पेटु भरै अप्राधी ॥
जिहि परलोक जाइ अपकीरति सोई अबिदिआ साधी ॥
हिंसा तउ मन ते नहीं छूटी जीअ दइआ नही पाली ॥
परमानन्द साधसंगति मिलि कथा पुनीत न चाली ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1253)

भक्त भीखन जी

भक्त भीखन जी की बाणी भी गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 659 में दर्ज है । उनके दो शब्द राग सोरठ में है । बाणी के पहले शब्द की मुख्य भावना बैराग है और दूसरे शब्द में बैराग (अंजन माहि निरंजन) के बाद अकाल पुरख की प्राप्ति की अवस्था का जिक्र है ।

डा. तारन सिंह इनके अकबर के राज के समय पैदा हुए मानते हैं और आप इस्लाम धर्म के सूफी प्रचारक थे एवं इनका अन्तिम समय 1574 ईस्वी था । भाई काहन सिंह नाभा इन्हें काकोरी का वसनीक और सूफी फकीर के रूप में मान्यता देते हैं । मैकालिफ भी इसी धारणा को स्वीकार करता है ।

भक्त जी का गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज शब्द इस प्रकार है –

नैनहु नीरु बहै तनु खीना भए केस दुध वानी ॥
रूधा कंठु सबदु नही उचरै अब किआ करहि परानी ॥
राम राइ होहि बैद बनवारी॥ अपने संतह लेहु उबारी ॥ रहाउ ॥
माथे पीर सरीरि जलनि है करक करेजे माही ॥
ऐसी बेदन उपजि खरी भई वा का अउखधु नाही ॥
हरि का नामु अमृत जलु निरमलु इहु अउखधु जगि सारा ॥
गुर परसादि कहै जनु भीखनु पावउ मोख दुआरा ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 659)

भक्त सूरदास जी

भक्त सूरदास जी एक ही ऐसे भक्त हुए हैं जिनकी केवल एक पंक्ति गुरू अर्जुन पातशाह के शब्द के साथ जुड़ कर गुरू ग्रंथ साहिब में सुशोभित है और इसे शीर्षक 'सारंग महला 5 सूरदास' के नीचे दिया हुआ है ।

भक्त सूरदास जी का सम्बन्ध अकबर के समय के राज्य संदीला से है और आप अकबर के प्रमुख अहलकार थे। इनका जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ था ।

भक्त सूरदास जी की बाणी इस तरह है :

छाडि मन हरि बिमुखन की संगु ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1253)

भक्त सैण जी

गुरू ग्रंथ साहिब के अंग 695 पर राग धनासरी में भक्त सैण जी का एक शब्द अंकित है। भक्त सैण जी का प्रमाणित जन्म वर्ष 1390 ईस्वी है व अन्तिम समय 14 40 ईस्वी माना जाता है । आप बिदर के राजा के शाही नाई थे और उस समयके प्रमुख संत ज्ञानेश्वर जी के परम सेवक थे ।

आप जी के परोपकारी स्वभाव तथा प्रभु के प्यारे के रूप में प्राप्त की हुई हरमन-प्यारता का बहुत खूबसूरत चित्रण गुरू ग्रंथ साहिब व भाई गुरदास जी की वारों में मिलता है । यह इस बात को रूपमान करती है किप्रभु की कृपा के राह में जाति या जन्म का कोई अर्थ नहीं है, उसका परा होने के लिए समर्पण प्रमुख गुण है। गुरू अर्जुन पातशाह का महा वाक्य है -

जैदेव तिआगिओ अहमेव ।। नाई उधरिओ सैनु सेव ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1192)

सो स्पष्ट है कि भक्त जनों की इज्जत रखने वाला स्वयं अकाल पुरख है और वह इस कार्य को करने के लिए युगों -युगों से कार्यशील भी है। भक्त सैणजी का गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज शब्द इस प्रकार है -

धूप दीप घ्रित साजि आरती ।। वारने जाउ कमला पती ।।
मंगला हरि मंगला ।। नित मंगलु राजा राम राइ की ।। रहाउ ।।
ऊतमु दीअरा निरमल बाती ।। तुही निरंजनु कमला पाती ।।
रामा भगति रामान्नदु जानै ।। पूरन परमान्नदु बरवानै ।।
मदन मूरति भै तारि गोबिंदे ।। सैनु भणै भजु परमान्नदे ।।

(गु. गं. सा. अंग 695)

भक्त जयदेव जी

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज 'भक्त बाणी' के रचनहारों में भक्त जयदेव जी सब से बड़ी उम्र के थे। प्रचलित मत के अनुसार आप का जन्म 1170 ईस्वी में बँगाल के बीर भूमि जिले के गाँव केंदली में हुआ। भाई काहन सिंह नाभा के अनुसार, जयदेव कनौज निवासी भोजदेव ब्राह्मण का पुत्र, जो रमादेवी के गर्भ से केंदली, जिला बीर भूमि, बँगाल में बारहवीं सदी के अन्त में पैदा हुआ । आरम्भ में जयदेव वैष्णव मताधारी कृष्ण उपासक थे लेकिन तत्तवेता साधुओं की संगत के कारण आप एक करतार के अनन्य सेवक हो गए ।

भक्त जयदेव जी की बाणी के अनुसार परमात्मा की प्राप्ति में अवगुण या हउमै रूकावट बन जाते हैं तथा इससे बचने का एक ही राह मन बच कर्म की शुद्धता है । जीव को गोबिंद के जाप में लीन रहना चाहिए, यह लीनता ही प्रभु के द्वार का राह है । इसी लीनता ने ही जयदेव व गोबिन्द एक किए थे, जिसका जिक्र भक्त कबीर जी की बाणी में भी है -

जैदेउ नामा बिप सुदामा तिन कउ कृपा भई है अपार ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 856)

बाणी : 2 शब्द, गूजरी व मारू राग में

भक्त त्रिलोचन जी

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में अपनी बाणी द्वारा हमेशा हमेशा के लिए अमरता प्राप्त करने वाले भक्तों में भक्त त्रिलोचन आयु के काल अनुसार तीसरे स्थान पर आते हैं । इनके जन्म के बारे में प्रमानित समय 1267 ईस्वी है । इनके माता पिता या साँसारिक रिश्तेनाते का किसी भी प्रमाणिक स्रोत से कुछ नहीं पता चलता लेकिन यह माना जाता है कि महाराष्ट्र राज्य के जिला शोलापुर के गाँव बारसी से इनके जन्म का सम्बन्ध है ।

गुरबाणी एवं भाई गुरदास जी के लेखन में भक्त नाम देव व त्रिलोचन जी के दोस्ताना सम्बन्धों के बारे में जिक्र मिलता है । गुरबाणी में यहाँ तक हवाला मिलता है कि भक्त नाम देव के साथ से इन्हें अपने भीतर छिपी हुई परमात्म ज्योति का अहसास हुआ -

नामा कहै तिलोचना मुख ते रामु संमालि ।।

हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि ।।(गु. ग्रं. सा. अंग 1375)

गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज आप की बाणी में जहाँ झूठे आडंबरों की घोर निषेधी की है, वहीं भेषों-पाखण्डों का त्याग करने पर ज़ोर डालते हुए परमात्मा के घर का वासी बनने की ओर उत्साहित किया गयाहै ।

बाणी कुल जोड़ : 4, तीन रागों में

भक्त नामदेव जी

भक्त नामदेव जी का जन्म 1270 ईस्वी में महाराष्ट्र के जिला सतारा के गाँव नरसी बामणी में हुआ। भारतीय वर्ण-वर्ग में आप की जाति छींबा, अछूत मानी जाती थी । आप के पिता जी का नाम दम सेती व माता जी का नाम गोना बाई था। आप ने बचपन से ही परमात्मा से प्यार करने की कला अपने पिता जी से प्राप्त की । आपने धार्मिक विद्या के लिए विशोभा खेचर को गुरू धारण किया और सारी ज़िन्दगी निरगुण ब्रह्म के उपासक के रूप में व्यतीत की । परमात्मा से एकसुरता से आप स्वयं हरि रूप हो गए थे, लेकिन उस समय के जाति पाति प्रबन्ध में उलझे समाज में आप का अनेक बार तिरस्कार हुआ । उच्च जाति के लोग शूद्र समझ आप की बेइज्जती करना अपना हक मानते थे । मन्दिर में से धक्के दे कर निकालने और परमात्मा द्वारा अपने भक्त की इज्जत-मानी रक्षा का उल्लेख आप की बाणी में उपलब्ध है -

हसत खेलत तेरे देहुरे आइआ ।।

भगति करत नामा पकरि उठाइआ ।।

हीनड़ी जाति मेरी जादिम राइआ ।।

छीपे के जनमि काहे कउ आइआ ।।

लै कमली चलिओ पलटाइ ।।

देहुरै पाछै बैठा जाइ ।।

जिउ जिउ नामा हरि गुण उचरै ।।

भक्त जनाँ कउ देहुरा फिरै ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1164)

भक्त नामदेव जी की गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज बाणी जहाँ परमात्मा को कायनात का मालिक दर्शाते है, वहीं उसके सिमरन से जो कृपा होती है, उसका जिक्र आप अपने खुद के साथ घटित घटनाओं से स्पष्ट कर देते हैं

। इससे उस समय की सामाजिक बंदर बांट, हाकम की बेहुरमती व पुजारी की लूट का स्पष्ट उल्लेख भी मिलता है । ऐतिहासिक स्रोत इस बात की पुष्टि करते हैं कि अन्तिम दिनों में आप पँजाब आ गए और व गुरदासपुर जिले के गाँव घुमाण में रैन-बसेरा किया । जहाँ ही आप ने 1350 ईस्वी में परलोक गमन किया ।

बाणी कुल जोड़ : 61 शब्द, 18 रागों में

भक्त सधना जी

गुरू ग्रंथ साहिब में भक्त सधना जी का एक शब्द राग बिलावल में जर्द है । इनकी जन्म तिथि, देहांत व माता-पिता के बारे में कोई प्रमाणिक जानकारी नहीं मिलती । यह माना जाता है कि आप मुस्लिम परिवार से सम्बन्धित थे लेकिन बाद में किसी हिन्दू भक्त के मेल से आप ने शरीयत को तिलांजली दी । महान कोष में आप के नाम के नीचे जो जानकारी मिलती है, उसमें बताया गया है कि आप सेहबान, जिला सिंध के रहने वाले थे और आप का पेशा कसाई था। आपको प्रभु के प्यारों का मिलाप परमात्मा की भक्ति की ओरले गया तथा आप प्रभु की दरगाह में कबूल हुए । इस बात की पुष्टि भाई गुरदास जी की बारहवीं वार में से हो जाती है -

धंना जटु उधारिआ सधना जाति अजाति कसाई ॥

भक्त सधना जी का गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज शब्द इस तरह है -

नृप कंनिआ के कारनै इकु भइआ भेखधारी ॥
कामारथी सुआरथी वा की पैज सवारी ॥
तव गुन कहा जगत गुरा जउ करमु न नासै ॥
सिंघ सरन कत जाईऐ जउ जंबुकु ग्रासै ॥ रहाउ ॥
ऐक बूंद जल कारने चातृकु दुखु पावै ॥
प्रान गए सागरु मिलै फुनि कामि न आवै ॥
प्रान जु थाके थिरु नहीं कैसे बिरमावउ ॥
बूडि मूए नउका मिलै कछु काहि चढ़ावउ ॥
मैं नाही कछु हउ नहीं किछु आहि न मोरा ॥
अउसर लजा राखि लेहु सधना जनु तोरा ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 858)

भक्त बेणी जी

भक्त बेणी जी के जन्म या परिवार के बारे में प्राचीन स्रोत-साहित्य बिल्कुल खामोश है। मैकालिफ बिना किसी स्रोत का जिक्र किए आप का न्म तेरहवीं सदी का अन्त मानता है । इसी तरह एक पँजाबी पत्रिका इन्हें मध्यप्रदेश के ब्राह्मण परिवार में पैदा हुए दर्शाती है ।

गुरू ग्रंथ साहिब में जो आप की बाणी दर्ज है, उससे स्पष्ट होता है कि आप का सम्बन्ध निरगुणवादी भक्ति के साथ है और हो सकता है कि भक्ति लहर के उत्तर भारत में दाखिल होने वालों के प्रमुखों में आप हो ।

भाई गुरदास जी अपनी रचना में भक्त बेणी जी की तस्वीर एक एकांत-वास प्रभुरंग में रंगे हुए भक्त के रूप में करते हैं । आप हमेशा भक्ति में लीन रहते । कुछ भी हो आप की रचना में गहरी दार्शनिकता और

सामाजिक चित्र का रूप सामने आता है, जो धार्मिक कर्मकांडों का सख्ती से विरोध ही नहीं करता बल्कि ब्राह्मण एवं योगी परम्परा द्वारा किए प्रपंचों को भी नंगा करने में समर्थ था। आप जी के व्यक्तित्व के बारे में भट कलय इस तरह लिखते हैं -

भगतु बेणि गुण रवै सहजि आतम रंगु माणै ॥
जोग धिआनि गुर गिआनि बिना प्रभ अवरु न जाणै ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1390)

बाणी रचना : 3 शब्द, 3 रागों में

भक्त रामानन्द जी

भक्त रामानन्द जी ने उदारवादी सम्प्रदाय की नींव रखी। आप ने शूद्रों भाव तथाकथित अछूतों व अन्य छोटी जाति के भक्तों को अपने सम्प्रदाय में शामिल किया और उन्हें हृदय से लगा भक्ति मार्ग में उनकी अगुवाई की । रामानन्द जी का सब से खूबसूरत पहलू यह था कि आप ने सँस्कृत का त्याग कर लोक-भाषा में अपने विचार पेश किए, बेशक सँस्कृत में भी इनके कुछ ग्रंथ मिलते हैं ।

आपने अपना अन्तिम समय काशी के गँगा घाट के रमणीक स्थान पर व्यतीत किया और यहाँ ही 1267 ईस्वी में परलोक गमन कर गए ।

गुरू ग्रंथ साहिब में आपका एक शब्द अंग 1195 पर राम बसंत में दर्ज है -

कत जाईऐ रे घर लागो रंगु ॥मेरा चितु न चलै मनु भइओ पंगु ॥ रहाउ ॥
एक दिवस मन भई उमंग ॥ घसि चंदन चोआ बहु सुगंध ॥
पूजन चाली ब्रह्म ठाइ ॥ सो ब्रहमु बताइओ गुर मन ही माहि ॥
जहा जाईऐ तह जल परवान ॥ तू पूरि रहिओ है सभ समान ॥
बेद पुरान सभ देखे जोइ ॥ऊहाँ तउ जाईऐ जउ इहाँ न होइ ॥
सतिगुर मै बलिहारी तोर॥ जिनि सकल बिकल भ्रम काटे मोर ॥
रामानन्द सुआमी रमत ब्रह्म ॥ गुर का सबदु काटै कोटि करम ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1195)

शेख फरीद जी

चिश्ती सिलसिले के प्रमुख बाबा फरीद जी का जन्म 1173 को गाँव खोतवाल जिला मुलतान में शेख जमालुद्दीन सुलेमान के घर हुआ । आप जी की माता जी का नाम मरीयम था । आप की पारिवारिक पृष्ठभूमि गज़नी के इलाके से जुड़ती है लेकिन नित्य की बंदअमनी के कारण आप के बुजुर्ग मुलान के इस गाँव में आ बसे थे । बाबा फरीद के ऊपर इस्लामी रंगत लाने में सब से बड़ा योगदान आप की माता जी का था । यह लिवलीनता इतनी प्रबल हुई कि सोलह साल की आयु तक आप ने हज की रस्म सम्पूर्ण करके हाजी की पदवी भी हासिल कर ली थी तथा सारा कुरआन जुबानी याद करके आप हाफिज़ भी बन गए थे ।

इतिहास के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि आप के तीन विवाह हुए तथा आप के घर नौ बच्चे पैदा हुए । अप की बड़ी पत्नि हिन्दुस्तान के बादशाह बलबन की पुत्री थी, जिसने हर प्रकार के सुख आराम का त्याग करके सारी उम्र फकीर वेष में व्यतीत कर दी ।

चिश्ती सिलसिले के प्रसिद्ध सूफी फकीर ख्वाजा कुतुबद्दीन काफी आप जी के मुरशदथे । इनकी मौत के बाद बाबा फरीद जी को मुखिया नियुक्त कर दिया गया। आप ने अपना इकाना पाकपटन बना लिया । यहाँ ही 1265 ईस्वी में आप के शिष्य हज़रत निजामुद्दीन औलीया जो बाद में इनके गद्दीनशीन हुए, ने आप जी की कब्र पर एक आलीशान मकबरा तासीर करवाया ।

सिक्ख धर्म के संस्थापक गुरू नानक पातशाह जब अपनी दासियों के दौरान पश्चिम की ओर गए तो आप जी ने उस समय के शेख फरीद जी के गद्दीनशीन शेख ब्रह्म, जो फरीद जी के पश्चात् ग्यारहवें स्थान परथे, को मिले । गुरू नानक साहिब व शेख ब्रह्म के बीच कई दिन तक संवाद चला । शेख ब्रह्म गुरू साहिब से बेहद प्रभावित हुए एवँ अपने बर्जुर्ग मुरशद की बाणी गुरू साहिब के हवाले कर दी, जो पंचम पातशाह ने आदि ग्रंथ की सम्पादना के समय इस पवित्र ग्रंथ का हिस्सा बनाई ।

बाणी रचना : 4 शब्द, 2 रागों में तथा 112 सलोक

कुल जोड़ : 116

भट बाणी

सँस्कृत के शब्द 'भ्रित' का पंजाबी रूपांतरण 'भट' है । यह 'भ्रि' धातु से बना माना जाता है । यह शब्द आम करके उन लोगों के लिए प्रयोग किया जाता है जो पैसे लेकर अपने मालिक की ओर से लड़ते थे तथा मालिक के प्रति वफादारी का प्रकटाव करते हुए जिन्दगी और मौत को एक समान स्वीकार करते थे । इसके अतिरिक्त इस शब्द का प्रयोग उन लोगों के लिए भी किया जाता था जो महाबली योद्धाओं तथा शूरवीरों का गुणगान करते थे । 'महान कोष' ने भी 'भट' शब्द के अर्थ उन लोगों के लिए किए हैं जो महापुरूषों का यश गायन करते थे या बंसावलीनामा उच्चारण करके किसी मनुष्य या परिवार को चार चाँद लगाते थे । इसके साथ ही भट के अर्थ योद्धा एवँ वीर सिपाही के रूप में भी किए मिलते हैं ।

असल में इस जाति का सदियों पुराना इतिहास मौजूद है जो भटाकसुरी लिपि में है । नौवीं सदी ईसा से इनकी चढ़त के दिन आरम्भ होते हैं । राजस्थान के इलाके में इनकी अद्‌भुत कथाएं प्रचलित हैं जो इनकी वीरता का गुणगान करती हैं और इन्हें समाज निर्माण करने वाले के रूप में सामने भी लाती हैं । राजा पृथ्वी चन्द को कैसे मुहम्मद गौरी की कैद से बाहर निकलवाया और फिर उसके हाथों मुहम्मद गौरी की हत्या करा के अपने आप को कुर्बान करने वाला चाँद भी भट कबीले से ही सम्बन्धित था । चाँद भट का यह किस्सा राजस्थान के बच्चे बच्चे की जुबान पर अंकित है । स्पष्ट है कि भट्टों के दो ही मुख्य काम थे –कीर्ति तथा वीरता का प्रकटाव करना ।

जब पँजाब की धरती पर गुरू नानक पातशाह ने '1' का नाद गुंजा कर शोषित से स्वतन्त्रता का प्रसंग सिरजते हुए, मनुष्य को मनुष्य होने का अहसास करवाया, उसे भूत एवँ भविष्य के चक्कर में से निकाल कर उसका वर्तमान प्रसंग सिरजा, तो इस मत की सारी लोकाई को गुरू नानक साहिब में अपनी बन्द-खलासी की पैगम्बरी रूह के झलकारे नज़र आने लगे । अब गुरू नानक उनका सच्चा पातशाह था । गुरू नानक पातशाह के फैले इस प्रताप की महिमा जब भट्टों के कानों में पड़ी तो वे भी गुरू दरबार में पहुँचे। गुरू साहिबान जैसी ईश्वरीय रूहों के दर्शन करके इनकी आँखें मुन्द गई, ये धन्य-धन्य कर उठे और फिर कीतिर्त व वीरता के प्रकटाव की

अनेक उदाहरणें हैं । भट्टों ने गुरू साहिबान की उस्तति में शब्द रचना भी की जो गुरू ग्रंथ साहिब में मौजूद हैं और साथ ही जंगों-युद्धों में शहादतें भी दीं ।

भट कलसहार जी

बाणी : कुल जोड़ 54

भट कलसहार जी ने पाँचों गुरू साहिबान जी की स्तुति में सवैये उच्चारण किए हैं । आप के पिता जी का नामभट चौखा जी था जो कि भट भिखा जी के छोटे भाई थे । भट गयंद जी आप के भाई थे । कई सवैयों में इन्होंने अपना नाम कलसहार के स्थान पर, उपनाम टल या कलह भी प्रयोग किया है ।

भट जालप जी

बाणी : कुल जोड़ 5

भट जालप जी को 'जल' नाम से भी सम्बोधित किया गया है। आप जी के पिता भट भिखा जी थे । आप जी के छोटे भाई भट मथुरा जी व भट कीरत जी थे, जिनके सवैये भी श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज है । आप जी के लेखन अनुसार आप जी के हृदय में जो सत्कार गुरू घर से तथा विशेषतय गुरू अमर दास जी के साथ था, उसकी सीमा का अनुमान लगाना कइन था ।

भट कीरत जी

बाणी : कुल जोड़ 8

भट कीरत जी भट्टों की टोली के मुखिया भिखा जी के छोटै सुपुत्र थे । आप जी की बाणी जहाँ बहुत ही दिल को खींचने वाली है, वहीं उसका रूप श्रद्धामयी है । जहाँ आप ने बाणी के द्वारा गुरू स्तुति की, वहीं गुरू हरिगोबिन्दज ी की फौज में शामिल हो कर मुगलों के विरूद्ध हुए युद्धों में शाही जलाल का प्रदर्शन करते हुए शहादत का जाम भी पिया ।

भट भिखा जी

बाणी : कुल जोड़ 2

भट भिखा जी, भट रईआ जी के सुपुत्र थे एवँ आप जी का जन्म सुलतानपुर में हुआ था । आप जी के सुपुत्र भट कीरत जी, मथुरा जी व जालप जी ने भी गुरू अमरदास जी, गुरू राम दास जी तथा गुरू अर्जुन देव जी की बहुत ही सुन्दर शब्दों में स्तुति की है ।

भट सलह जी

बाणी : कुल जोड़ 3

भट सलह जी, भट भिखा जी के छोटे भाई सेखे के सुपुत्र व भट कलह जी के भाई थे ।

भट भलह जी

बाणी : कुल जोड़ 1

भट भलह जी, भट सलह जी के भाई व भिखाजी के भतीजे थे ।

भट नलह जी

बाणी : कुल जोड़ 16

भट नलह जी को 'दास' के उप-नाम से भी जाना जाता है । गोइंदवाल की पवित्र धरती को आप बैकुण्ठ का दर्जा देते हैं ।

भट गयंद जी

बाणी : कुल जोड़ 13

भट गयंद जी, भट कलसहार जी के छोटे भाई व भट्टों के मुखिया भट भिखा जी के एक भाई चौखे के सुपुत्र थे । गुरू साहिबान की स्तुति में रचे भट गयंद जी के सवईयों में सिक्ख की अपने गुरू प्रति सच्ची आस्था रूपमान होती है ।

भट मथुरा जी

बाणी : कुल जोड़ 14

भट मथुरा जी, अपने भाईयों भट कीरत जी व भट जालप जी तथा अपने पिता भट भिखाजी की तरह गुरू साहिब को परमात्मा स्वरूप मानते थे ।

भट बलह जी

बाणी : कुल जोड़ 5

भट बलह जी, भट भिखा जी के भाई सेखे के सुपुत्र थे ।

भट हरिबंस जी

बाणी : कुल जोड़ 2

भट हरिबंस जी ने विलक्षण शैली में गुरू ज्योति की महिमा व महत्वता वर्णन करके उस अखंड ज्योति के प्रति अपनी आस्था प्रकट की है ।

गुरू सिक्ख बाणीकार

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के बाणीकारों की जो प्रमाणित तरतीब है, उसमें 4 महापुरूषों - भाई मरदाना जी, बाबा सुंदर जी, भाई सत्ता जीव भाई बलवण्डजी की बाणी है । इन्हें गुरू घर के निकटवर्ती श्रद्धालु या गुरसिक्ख के तौर पर जाना जाता है । इनका जीवन व रचना का संक्षेप अध्ययन इस प्रकार है ।

भाई मरदाना जी

भाई मरदाना सिक्ख धर्म का प्रथम अनुयायी, नानक पातशाह के सच को पहचानने वाला और पूरी जिन्दगी साथ निभाने वाला गुरू का पूरा सूरा गुरसिक्ख 1459 ईस्वी को गुरू की ही नगरी तलवंडी में भाई बादरे के घर माई लख्खें की गोद में पैदा हुआ । भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में जो अकाल पुरखी रूहों का जिक्र किया है, उसमें दूसरा अकाल पुरखी रूप भाई मरदाना है ।

इक बाबा अकाल रूप, दूजा रबाबी मरदाना

भाई मरदानाजी के जब एक बार गुरू साहिब की नज़र से नज़र मिला कर देखा तो 'इेक जोति दुइ मूरती' का ईलाही प्रसंग स्थापित हो गया । भाई मरदाना को ता-ज़िन्दगी ईश्वरीय दात प्राप्त थी । गुरू नानक का आलौकिक नाद व भाई मरदाना का रबाब पाँच सदियों से सिक्ख इतिहास के पैरोकारों का हृदय बनी हुई है । गुरू साहिब की उदासियों के दौरान करम से कदम मिलाते हुए भाई मरदाना स्वयँ नानक हो चुका था । गुरू पातशाह इस महापुरूष को किस प्रकार सत्कार देते हैं, इसका प्रकटाव जन्म-साखियों में से हो जाता है, जहाँ पापियों, पाखंडियों, घमंडियों व दुराचारियों के उद्धार के लिए भाई मरदाना माध्यम बनता है । अपनी जिन्दगी गुरू घर को अर्पित कर चुका यह सिक्ख आज भी सिक्ख धर्म में बड़ी उदाहरण के रूप में एक चिन्ह बन चुका है ।

पश्चिम की अन्तिम यात्रा की वापसी के समय अफगानिस्तान के खुरम्म नदी के तट पर इस पुरूष ने गुरू नानक साहिब की झोली में अन्तिम श्वास लिए । गुरू साहिब ने भाई मरदाना की इच्छा अनुसार अपने हाथों से उनका अन्तिम सँस्कार किया । इसी स्थान पर भाई मरदानाजी की यादगार आज भी सुशोभित है ।

गुरू ग्रंथ साहिब में बिहागड़े की वार में तीन सलोक दर्ज हैं, जिनका शीर्षक है - सलोक मरदाना एक, मरदाना एक व मरदाना एक ।

इस बाणी में विष-विकार पैदा करने वाले नशों को छोड़ सच्चे नाम के नशे के साथ शरसार होने की शिक्षा है । उदाहरण के रूप में एक सलोक इस प्रकार है -

सलोकु मरदानां ॥ १ ॥

कलि कलवाली कामु मदु मनूआ पीवणहारु ॥
क्रोध कटोरी मोहि भरी पीलावा अहंकारु ॥
मजलस कूड़े लब की पी पी होइ खुआरु ॥
करणी लाहणि सतु गुड़ु सचु सरा करि सारु ॥
गुण मंडे करि सीलु घिउ सरमु मासु आहारु ॥
गुरमुखि पाईऐ नानका खाधै जाहि बिकार ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 553)

बाबा सुंदर जी

बाबा सुंदर जी का सम्बन्ध गुरू अमरदास जी के परिवार से है। आप गुरू अमरदास जी के साहिबजादे बाबा मोहरी जी के पौत्र व भाई अनंद जी के पुत्र थे । इस तरह आप गुरू अमरदास जी के पड़-पौत्र हुए । बाबा सुंदर जी की बाणी 'सदु' राम रामकली में गुरू ग्रंथ साहिब के अँग 923 पर सुशोभित है ।

'सदु' का शब्दिक अर्थ बुलावा है । आप जी की रचना 'सदु' की 6 पउड़िया हैं । इस रचना का मुख्य आधार रजा मानना है, जगत चलायेमान है तथा इस सत्य को स्वीकार करते हुए मरने पर रोना-धोना न करने का उपदेश है । इस बाणी का सारांश इस प्रकार है कि गुरू अमरदास जी ने अपने अन्तिम समय परिवार को हुक्म किया कि -

- उनकी मौत के बाद किसी ने रोना नहीं । रोने का मतलब प्रभु की मर्जी को अस्वीकार करना होगा ।
- मेरे जाने के पश्चात् गुरबाणी का रस भरपूर कीर्तन करना व अकाल पुरख की कथाएं कहनी व सुननी।
- कोई भी मनमत वाला कर्मकांड नहीं करना ।

- अगले गुरू के तौर पर 'रामदास जी' में अपना आपा रख कर गुरू पदवी दे दी ।

आप जी की बाणी का रूप इस प्रकार है -

सतिगुरि भाणै आपणै बहि परवारु सदाइआ ।।
मत मै पिछै कोई रोबसी सी मैं मूलि न भाइआ ।।
मितु पैझै मितु बिगसै जिसु मित की पैज भावए ।।
तुसी वीचारि देखहु पुत भाई हरि सतिगुरू पैनावए ।।
सतिगुरू परतखि होदै बहि राजु आपि टिकाइआ ।।
सभि सिख बंधप पुत भाई रामदास पैरी पाइआ ।।
अंते सतिगुरू बोलिआ मै पिछै कीरतनु करिअहु निरबाणु जीउ ।।
केसो गोपाल पंडित सदिअहु हरि हरि कथा पड़हि पुराणु जीउ ।।
हरि कथा पड़ीऐ हरि नामु सुणीऐ।।
बेबाणु हरि रंगु गुर भावए ।।
पिंडु पतलि किरिआ दीवा फुल हरि सरि पावए ।।
हरि भाइआ सतिगुरू बोलिआ हरि मिलिआ पुरखु सुजाणु जीउ ।।
रामदास सोढी तिलकु दीआ ।।
गुर सबदु सचु नीसाणु जीउ ।।5।। (गु. ग्रं. सा. अंग 923)

राय बलवण्ड व भाई सत्ता

भाई बलवण्ड व भाई सत्ता गुरू घर के सुप्रसिद्ध कीर्तनकार थे । भाई मरदानाजी के बाद सिक्ख धर्म में इन दोनों को बेहद प्यार व सत्सकार प्राप्त हुआ। सिक्ख धर्म की इन सम्मानयोग हस्यिों का दुखांत पक्ष यह है कि इनकी जन्म तिथि, स्थान व घर के बारे में कोई भी जानकारी नहीं मिलती । इनकी रचनाओं से इनके जीवन पर नज़र मारी जासकती है ।

इनकी रचना जहाँ इन्हें बड़ा विद्वान व युग पुरूष के रूप में स्थापित करती है, वहीं इनकी रचना से यह भी प्रकट होता है कि यह अभिन्न सिक्ख ही नहीं थे बल्कि गुरू सिद्धान्त की पूर्ण तरह चेतनता वाले भी थे । गुरू सिद्धान्त व गुरू दरबार की शोभा ने इनकी बाणी को आध्यात्मिकता के साथ साथ एक ऐतिहासिक स्रोत के रूप में भी मान्यता दिलाई है ।

इन कीर्तनकारों के बारे में एक प्रचलित रवायत भी है कि यह एक बार गुरू घर से बेमुख हो कर गुरू दरबार को छोड़ कर चले गए, फिर दर दर की ठोकरें नसीब हई और अन्त गुरू घरके पूर्ण गुरसिक्ख भाई लधा जी द्वारा की गई विनती पर आप बख्शे गए। ऐसी कहानियों को असलियत की बजाए प्रतीक रूप में समझना अधिक वाजिब होगा, क्योंकि हउमे (अहंकार) रूपी पहाड़ से जब मनुष्य मुँह के बल गिरता है तो जिन्दगी के सारे रास्ते बंद हो जाते हैं । इस कथा में जहाँ हउमे का अवगुण रूपमान होता है, वहीं गुरू घर द्वारा बख्श दिए जाने का सिद्धांतक प्रसंग भी अपने आप स्थापित हो जाता है ।

इन दोनों महापुरूषों की बाणी की कुल 8 पउड़ियाँ हैं जिनमें से पांचं पउड़ियों की रचना राय बलवण्ड जी

की है और तीन पउड़ियों के रचियता भाई सत्ता जी हैं । यह रचना रामकली राग में अंकित है तथा इसका शीर्षक है -

रामकली की वार राइ बलवंड तथा सतै डूमि आखी ।

राय बलवण्डजी की पउड़ियों में गुरू नानक पातशाह द्वारा भाई लहिणा को गुरगद्दी देकर गुरू अंगद के रूप में स्थापित करना और गुरू अंगद देव जी के समय सिक्खी के विकास के रूप का प्रकटाव है ।

भाई सत्ते द्वारा रचित पउड़ियों में गुरू अंगद देव जी से लेकर पंचम पातशाह हजूर तक के काल के सफर को रूपमान किया गयाहै । इन दोनों की रचनाओं का रूप इस प्रकारहै -

भाई बलवण्ड

लहणे दी फेराईऐ,नानका दोही खटीऐ ॥
जोति ओहा जुगति साइ,सहि काइआ फेरि पलटीऐ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 966)

भाई सत्ता

दूणी चउणी करामाति,सचे का सचा ढोआ ॥
चारे जागे चहु जुगी,पंचाइणु आपे होआ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 968)

गुरू ग्रंथ साहिब के उपदेश

युगों युग अटल श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के भीतर का उपदेश परस्पर प्रेम, प्यार, निर्भयता, निरवैरता, दया, परोपकार, धार्मिक सहनशीलता, मानव समानता आदि अलौकिक गुणों से भरपूर है तथानाम जपना, किरत करना, वंड छकना व सेवा, संतोष, हुकम मानना आदि के लिए प्रेरणा का स्रोत है ।

सभी मतों के धर्म ग्रंथसत्य के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरणा करते हैं तथा सत्कार योग्य हैं परन्तु गुरू ग्रंथसाहिब जी में किसी एक फिरके, जमात या देश की बात नहीं की गई, बल्कि इनका उपदेश तो सभी वर्गो, देशों व मनुष्य मात्र के लिए सांझा है। गुरमति का सिद्धान्त बहुत स्पष्ट है कि हरकोई सच के मार्ग पर चलता हुआ अपने अपने धर्म की पालना करे और इसी में सारी मानवता का भला माँगा गया है । गुरू पातशाह का फरमान है -

जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि ॥
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 853)

सिक्ख धर्म से सम्बन्धित एक विदेशी विद्वान का कथन है कि गुरू ग्रंथ साहिब के उपदेशों से यह पूरी तरह सिद्ध हो जाता है कि सिक्ख धर्म सँसार में एक नया तथा बिल्कुल भिन्न धर्म है । असल में यह धर्म ऐसा है कि जिसे जीवन में आसानी से अमल में लाया जा सकता है । इस धर्म को मनुष्य जीवन के आध्यात्मिक लाभ से देखा जाए तो यह सारे सँसार में लगभग अपनी किस्म का आप ही है ।

गुरू ग्रंथ साहिब के प्रमुख उपदेशों को सरल ढँग से समझने के लिए इनका अलग अलग प्रसंग स्थापित करना आवश्यक हो जाता है ताकि खास तौर पर सिक्ख धर्म के पैरोकार व प्राय: सिक्ख धर्म को समझने वाले इसके अर्थो से पूरी तरह एकसुर हो सकें तथा किसी प्रकार की शंका व किन्तु-परन्तु पैदा ही न हो सके । इस बात को ध्यान में रखते हुए हम गुरू ग्रंथ साहिब के उपदेशों के आध्यात्मिक, सामाजिक, दर्शनिक, राजनीतिक

व नैतिक पहलुओं को देखनेका प्रयत्न करेंगे ।

1. आध्यात्मिक उपदेश

गुरू ग्रंथ साहिब के प्रमुख आध्यात्मिक सिद्धांतों में एक अकाल पुरख में विश्वास, सृष्टि रचना, नाम, सतसंगत व अरदास की व्याख्या के द्वारा धर्म एवं उपदेश के सम्बन्धों को सामने लाया जा सकता है । इसके आलवा और भी आध्यात्मिक सिद्धान्त हैं लेकिन उनके वर्णन की यहाँ गुंजाइश नहीं हैं तथा उनका विशलेषण आगे किया जाएगा ।

(1) गुरू ग्रंथ साहिब के आरम्भ में मूल-मंत्र दर्ज है और मूल मंत्र में परमात्मा के स्वरूप की व्याख्या की गई है । इस मूल मंत्र को गुरू ग्रंथ साहिब में मंगलाचरण के रूप में प्रयोग किया गया है ।

एक कर्ता में विश्वास

सिक्ख धर्म का मूल अकाल पुरख है । अकाल पुरख के स्वरूपएवं गुणों का व्याख्यान प्रमुखतौर पर मूल-मंत्र में से ही मिलता है । गुरू ग्रंथ साहिब के आरम्भ में दर्ज मूल मंत्र इस प्रकार है -

ੴ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ।।

: अकाल पुरख केवल एक है, उस जैसा और कोई नहीं तथा वह हर जगह एक रस व्यापक है ।

सतिनामु : उसका नाम स्थायी अस्तित्व वाला व सदा के लिए अटल है ।

करता : वह सब कुछ बनाने वाला है ।

पुरखु : वह सब कुछ बना कर उसमें एक रस व्यापक है ।

निरभउ: उसे किसी का भी भय नहीं है ।

निरवैरु : उसका किसी से भी वैर नहीं है ।

अकाल: वह काल रहित है, उसकी कोई मूर्ति नहीं, वह समय के प्रभाव से

मूरति : मुक्त है ।

अजूनी : वह योनियों में नहीं आता, वह न जन्म लेता है व न ही मरता है ।

सैभ : उसे किसी ने नहीं बनाया, उसका प्रकाश अपने आप से है ।

गुर प्रसादि : ऐसा अकाल पुरख गुरू की कृपा द्वारा मिलता है ।

यह मंगलाचरण किसी जगह पूरा व किसी जगह लघु स्वरूप में भी गुरू ग्रंथ साहिब में आया है । इसके कुल रूप इस प्रकार दर्ज है -

1. सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरू अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरप्रसादि (33 बार)
2. नामु करता पुरखु गुरप्रसादि।।
3. सति नामु गुरप्रसादि ।।
4. सतिगुर प्रसादि ।।

असल में मूलमंत्र में दिए प्रभु के गुण मनुष्य के भीतर उतारने तथा उसे प्रभु के समान बनाने का उपदेश

पहली बार गुरबाणी ने दिया क्योंकि जीव अगर परमात्मा के गुणों को अंगीकार कर लेगा तो सँसार में 'निरभउ निरवैरी' कीमतों की स्थापना होगी । इन्हीं कीमतों की स्थापना सचखण्ड की स्थापना का मार्ग दर्शन करेगी और सँसार 'बेगमपुरा' बन जाएगा ।

(2) सृष्टि रचना

विश्व का हर धर्म सृष्टि रचना के बारे में अपना अपना सिद्धांत प्रकट करता है । इनमें केवल एक समानता है कि सृष्टि की सृजना करने वाली कोई बड़ी शक्ति है । गुरू ग्रंथ साहिब भी सँसार के दूसरे धर्मों की तरह ब्रह्मांड की उत्पत्ति, उसके प्रकाश व विनाश को मानता है लेकिन दूसरे धर्म ग्रंथें की तरह तिथि, ऋतु, वार, युगों की संख्या के चक्करों में नहीं पड़ता और न ही इस बात से सहमत है कि धरती की रचना कुछ निश्चित दिनों में हुई है । सात आसमान व सात धरतियों के सिद्धांत को भी यह अस्वीकार करता है ।

गुरू ग्रंथ साहिब का उपदेश है कि सँसार की उत्पत्ति व विकास अकाल पुरख के हुक्म में है। अकाल पुरख सृष्टि का कर्त्ता व जगत का निर्माता भी है । कर्ते को उसकी कृत जान नहीं सकती तथा यह ब्रह्मांड अकाल पुरख की खेल है । जब वह चाहता है, इस खेल का विस्तार करना शुरू कर देता है और जब उसका दिल चाहता है इसे समेट कर अपने में शामिल कर लेता है ।

गुरू ग्रंथ साहिब के अनुसार ब्रह्मांड से पूर्व सुन्न व धुंधूकार की अवस्था थी, परमात्मा के हुक्म से उसमें से सृष्टि की उत्पत्ति हुई और इस उत्पत्ति को 'इहु जगु सचै की है कोठड़ी सचे का विचि वासु' के संदर्भ में मान कर जीना चाहिए ।

सृष्टि रचना का जो प्रसंग गुरू ग्रंथ साहिब में अंकित है, उस प्रसंग को भिन्न भिन्न धर्म ग्रंथों में दिए सृष्टि रचना के प्रसंग को निरर्थक सिद्ध करके इसे परमात्मा का अबूझ हुकम दर्शाया है । आधुनिक ज्ञान-विज्ञान ने अपनी खोज प्रक्रियाओं द्वारा जो सिद्ध किया है, उसी सच को गुरू ग्रंथ साहिब में उससे कहीं पहले रूपमान करके सिक्ख धर्म की सरदारी स्थापित कर दी गई है तथा इसे आधुनिक समय का धर्म मानते हुए बड़े बड़े वैज्ञानिक भी इसे नमन करने के लिए मजबूर हो जाते हैं । विज्ञान ने जो निष्कर्ष निकाले, उनमें अन्य धर्मों द्वारा स्थापित किए सृष्टि के पैदा करने के समय को नकारा है, उसकी प्रक्रिया को अस्वीकार किया है, सात आसमानों व सात धरतियों को मूल से ही रद्द किया है । विज्ञान द्वारा स्वीकार किया सृष्टि सृजना का प्रसंग गुरू ग्रंथ साहिब ने पहले ही स्थापित कर दिया ।

1. निश्चित समय को मानने से इन्कारी

जगत के बनने की तिथि, वार व ऋतु के बारे में कोई नहीं जान सकता । कोई मनुष्य नहीं बता सकता कि कौनसी ऋतु या माह था । जो सृजनहार इस जगत को पैदा करता है, वह स्वयं ही जानता है -

थिति वारु ना जोगी जाणै रुति माहु ना कोई ।।
जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 4)

2. सृष्टि से पहले की अवस्था

ब्रह्मांड के अस्तित्व से पहले सुन्न व धुंधूकार की अवस्था थी ।

अरबद नरबद धुंधूकारा।। धरणि न गगना हुकमु अपारा ।।
ना दिनु रैनि न चंदु न सुरजु सुन्न समाधि लगाइदा ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1035)

3. धरती के प्रसार सम्बन्धी

पातालों के नीचे और लाखों ही पाताल हैं तथा आकाशों के ऊपर अन्य लाखों आकाश हैं –

पाताला पाताल लख आगासा आगास ॥

यथा

– लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 5)

4 . परमात्मा का प्रसार

यह सारी रचना परमात्मा से पैदा हुई और उसी में समा जाती है ।

आपीनै आपु साजिओ आपीनै रचिओ नाउ ॥

दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 463)

(3) नाम

नाम गुरू ग्रंथ साहिब का प्रमुख उपदेश है । इसे सृजनहार, पालनहार व सर्व–समर्थ हस्ती के लिए भी प्रयोग किया गया है । इस प्रकार यह परमात्मा की सम्पूर्णताओं का प्रकाशन करने वाला ढँग भी है और इसके माध्यम द्वारा मनुष्य इनके रहस्य को बूझ भी सकता है ।

नाम एक सर्वव्यापक होद है जो हर जगह भरपूर होकर जर्रे जर्रे का उद्धार कर रहा है । नाम सबसे ऊँचा है, सर्व शक्तिमान है, सब जगह फैला हुआ है । नाम के बराबर अन्य कोई पदार्थ नहीं है, यह सब से श्रेष्ठ है ।

नाम तुलि कछु अवरु न होइ ॥

नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 265)

नामपरमात्मा का दूसरा रूप है ।

नाउ तेरा निरंकारु है नाइ लइऐ नरकि न जाईऐ ॥(गु. ग्रं. सा. अंग 465)

नाम माध्यम भी है व मंजिल भी । नाम को अनुभव का हिस्सा बनाए जाने की आवश्यकता को गुरू ग्रंथ साहिब में प्रकट किया गया है । नाम प्राप्ति का माध्यम व स्थान सतसंगत को प्रवान किया गया है । नाम कैसे जर्रे जर्रे में व्यापक है, इसे गुरू ग्रंथ साहिब के इस शब्द से जाना जा सकता है –

नाम के धारे सगले जंत ॥ नाम के धारे खंड ब्रहमंड ॥

नाम के धारे आगास पाताल ॥ नाम के धारे सगल आकार ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 284)

नाम अभ्यास से भाव है अहसास पैदा करना (Practising presence of God) । नामी प्राप्ति 'गुरप्रसादि' भाव गुरू की कृपा द्वारा हो सकती है ।

(4) सतसंगत

सतसंगत को गुरू ग्रंथ साहिब ने आध्यात्मिक चेतना का केन्द्रीय धुरा प्रधान किया है क्योंकि सतसंगत जाति पाति, ऊँच नीच व भेदभाव से मुक्त आध्यात्मिक संस्था है । सेवा व आत्म समर्पण इस की प्राथमिक जरूरते हैं । विष–विकार, बुरी आदतों से छुटकारा पाना व आत्मिक शांति की प्राप्ति के लिए सच्चे पुरूषों की संगत में बैठना, उनके महान उपदेशों के सुनना और प्रभु गुणों की चर्चा करनी आदि सतसंगत का प्राथमिक कर्म माना गया है ।

गुरू ग्रंथ साहिब सतसंगत को श्रेष्ठ ही नहीं मानता बल्कि आध्यात्मिक उन्नति एवँ सामाजिक बराबरी का जरूरी अंग भी प्रवान करता है क्योंकि सतसंगत वह है जहाँ सत्य मनुष्य एक सुर हो कर उस सच्चे परमात्मा के नाम का सिमरन करते हैं ।

सतसंगति कैसी जाणीऐ जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 72)

सतसंगत उसे माना जाता है जिसके सम्पर्क से जीव मुक्ति मार्ग पर चलपड़े । सतसंगत द्वारा सब पापों के नाश हो जाने की सम्भावना पैदा हो सकती है लेकिन शर्त यह है कि मन प्रभु के नाम सिमरन में लीन होने की कला सीख जाए और विकारों के पीछे भागने से हट जाए । सतसंगत में ही प्रभु के नाम (ज्ञान) का प्रकाश होता है ।

धनु धन्नु सतसंगति जितु हरि रसु पाइआ ॥
मिलि जन नानक नामु परगासि ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 10)

गुरू ग्रंथ साहिब का उपदेश है कि यहाँ ब्राह्मण या शूद्र का कोई भेद नहीं है। जो भी संगत की शरण में आया, वह प्रभु का प्यारा हो गया । बेशक यह जुलाहा कबीर था या चमार रविदास या धन्ना जाट -

साधू सरणि परै सो उबरै खत्री ब्राहमणु सूदु वैसु चंडालु चंडईआ ॥
नामा जैदेउ कंबीरु त्रिलोचनु अउजाति रविदासु चमिआरु चमईआ ॥
जो जो मिलै साधू जन संगति,धनु धन्ना जटु सैणु मिलिआ हरि दईआ ॥
(गु. ग्रं. सा. अंग 835)

रूहाणी गुणों के उजागर हो सकने की सम्भावनाओं से भरपूर साधसंगत एक ऐसे मानसरोवर के समान है जिसमें अमूल्य रत्न एवं सत्य, संतोष जैसे सदगुण पैदा हो सकते हैं । इन सारे दुर्लभ पदार्थों की होंद बीज रूप में सँसार के अन्दर ही है लेकिन इन्हें प्रकट करने में साध संगत सहायक हो सकती है, जैसे हंस मानसरोवर पर केवल मोती चुगने के लिए जाता है, वैसे ही गुरसिक्ख साध संगत रूपी मानसरोवर में जाकर सुरति द्वारा गुर-शब्द के मोती चुग कर सदगुणों से भरपूर हो कर गुरमति का अडोल राही हो जाता है ।

(5) अरदास

अरदास सिक्ख धर्म का एक बहुत ही महत्वपूर्ण सिद्धांत है । सिक्ख धर्म में इसके बिना कोई भी कार्य सम्पन्न नहीं होता। गुरूग्रंथ साहिब में बहुत ही खूबसूरत ढँग से अरदास का उपदेश रूप में वर्णन किया गया है तथा इसकी महत्वता को भी रूपमान किया गया है ।

अरदास असल में अकाल पुरख से बातें करने का माध्यम है । यह शब्द 'अरदास' गुरू नानक देव जी की बाणी में 26 बार, गुरू अमरदास जी की बाणी में 7 वार, गुरू रामदास जी की वाणी में 9 बार, गुरू अर्जुन देव जी की बाणी में 53बार, भगत कबीर जी की बाणी में एक बार,भट्टों के सवैये में 2 एवं सदु बाणी में एक बार आया है । गुरू ग्रंथ साहिब में इस शब्द की कुल सँख्या 99 बनती है ।

सँस्कृत मूल के अनुसार अरदास शब्द अरद+आस से बना है । इसका अर्थ है मुराद मांगने की प्रक्रिया। यह फारसी शब्द अरज+दासत का मेल है जिसका अर्थ है बिनै व विनति।

अरदास अपने आप में एक बहुत मूल्यवान व गुणकारी अमल है । इसके द्वारा जिज्ञासु अपने परमात्मा के साथ खुले दिल से बातें कर सकता है । अरदास ही मनुष्य की सीमित होंद और असीमित अकाल पुरख के बीच

की दूरी को पूरा करने का साधन बनती है ।

तीने ताप निवारणहारा दुख ह्यता सुख रासि ।।

ता कउ बिघनु न कोऊ लागै जा की प्रभ आगै अरदासि ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 714)

अकाल पुरख के आगे अरदास या प्रार्थना करने की परम्परा किसी न किसी रूप में दूसरे धर्मों में भी है लेकिन सिक्ख धर्म में अरदास का विलक्षण स्वरूप एवं सिद्धांत है । अरदास में सिक्ख अपनी इच्छा को परमात्मा की इच्छा के अधीन कर देता है और वाहिगुरू की रज़ा मानने और हुक्म में चलने की शक्ति मांगता है । इससे 'चढ़दी कला' के सिद्धांत की नींव टिक जाती है । समर्पित आपा ही चढ़दी कला के मार्ग पर चल सकता है, इसीलिए सिक्ख के लिए मुश्किल से मुश्किल समस्या में भी गुरू की टेक को कायम रखने का आदेश है । यही खुशियों व गमों को एक जैसा तस्लीम करने का सिद्धांत है ।

जीअ की बिरथा होइ सु गुर पहि अरदासि करि ।।

छोडि सिआणप सगल मनु तनु अरपि धरि ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 519)

अरदास द्वारा सिक्ख सदा जूझते रहने की प्रेरणा प्राप्त करसकता है । इसके पीछे 'ना कउ बैरी न ही बेगाना, सगल संगि हम कउ बनि आई' का सिद्धांत कार्य करता है । अरदास 'सरबत्त के भले' का एक अनोखा उपदेश है ।

2. दार्शनिक उपदेश

(1) हुक्म

हुक्म अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है फरमान, फत्वा, हकूमत और इजाजत । धार्मिक दुनिया में इसे इलाही आदेश के रूप में लिया जाता है । गुरू ग्रंथ साहिब में हुक्म को परमात्मा के नियमों के समूह के रूप में प्रयोग किया गया है । गुरू नानक पातशाह इसकी महिमा का बुत खूबसूरत व्यारव्यान करके इसे 'एको नाम' कहते हैं ।

एको नामु हुकमु है नानक सतिगुरि दीआ बुझाइ जीउ ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 72)

इसका भाव है कि सँसार मेंहरचीज़ हुक्म में ही होती है ।इस प्रकार हुक्म कार्य, कर्म एवं कर्मफल निर्धारित करने वाला नियम भी प्रवान किया जाता है। हुक्म के राहस्यमयी संदर्भ को समझने के लिए हमारे लिए 'जपु' की दूसरी पउड़ी को विचार लेना वाजिब होगा

हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ ।।

नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1)

इन पउड़ी में हुक्म के भिन्न भिन्न पक्ष लिए गए हैं –

1. सारी सृष्टि परमात्मा के हुक्म द्वारा अस्तित्व में आई है व हुक्म द्वारा ही चल रही है । कुछ भी हुक्म के घेरे से बाहर नहीं है ।

2. हुक्म की पहचान करने वाले जीव की महिमा है और जो हुक्म को नहीं मानता, वह उसकी मनमुखवता बन जाती है ।

3. हुक्म ज्ञान का प्रतीक है एवं हउमै अज्ञान का, इसीलिए हुक्म व हउमै एक राह के राही नहीं हैं बल्कि हउमै हमेशा हुक्म के विरोध में ही होती है –

हउमै नावै नालि विरोधु है दुइ न वसहि इक ठाइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 560)

हुक्म को बूझने के राह में हउमै भी रूकावट है । स्पष्ट हुआ कि हुक्म गुरमुखी जगत है एवं हउमै मनमुखी रास्ता।

हुक्म से बेमुख जीव जन्म-मरण के चक्कर में फँस जाता है । हुक्म को बूझना अपने सीमित आपे से मुक्त हो जाना है । सीमित आपे से विशाल आपे के साथअभेद होने का यह सफल मार्ग है । गुरमुख जब जन्म संवार कर दरगाह में जाने की तैयारी कर लेता है तो उसका आधार इस लोक में बिताया उसकी हुक्मी जीवन ही होता है ।

(2) हउमै

'हउमै' शब्द 'हउ' व 'मैं' का मेल है जिसके अर्थ है, 'मैं' व 'मेरा' । हउमै शब्द से भाव है अहंकार या अभिमान । गुरू ग्रंथ साहिब में हउमै शब्द का प्रयोग दर्शनिक व नैतिक दोनों अर्थो में हुआ है । जीव के शरीर में ही परमात्मा का वास है लेकिन वह अहंकार के कारण उसे देखने में असमर्थ है एवं मोह-माया में फंसा हुआ कर्म करता है । जो जो कर्म, इस लाल भरी हउमै को कायम रखने के लिए वह करता है, वह बंधन रूप बन जाते हैं तथ इनके कारण वह जन्म मरण के चक्कर में फँसा रहता है । जीवात्मा व परमात्मा एक जगह पर रहते हुए भी, अहंकार के कारण एक दूसरे के साथ एकजुट नहीं हो सकते ।

धन पिर का इक ही संगि वासा विचि हउमै भीति करारी ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 1263)

दोनों के बीच हउमै की दीवार खड़ी है तथा इस दीवार के गिरने के साथ ही परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है ।

हउमै जाई ता कंत समाई ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 750)

हउमै माया को मोहित करने वाली है, इसके प्रभाव अधीन जीव भटकता रहता है तथा यह हउमै गुरू के शब्द द्वारा नष्ट होती है तो यह बीच में से चली जातीहै। इस के जाने से यह होता है कि तन व मन पवित्र हो जाता है तथा नाम का मन मं वास हो जाता है । हउमै एक बड़ारोग है और गुरू के शब्द की कमाई से इससे छुटकारा पाया जा सकता है ।

हउमै दीरव रोगु है दारू भी इसु माहि ॥
किरपा करे जे आपणी ता गुर का सबदु कमाहि ॥
नानकु कहै सुणहु जनहु इतु संजमि दुरव जाहि ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 466)

जीव के लिए जरूरी है कि वह अपने सारे कार्य परमात्मा के हुक्मों के अनुसार करे और उसकी रजा में चल कर अपना जीवन व्यतीत करे। इसके इलावा हउमै को मारने के लिए उपाय भी गुरू ग्रंथ साहिब की बाणी में दर्शाए गए हैं, जैसे कि अपने को सब की धूल मानना भाव नम्रता, परमात्मा को सर्वव्यापक मानना, परमात्मा को हमेशा **अंग-संग समझना आदि इन सभी उपायों से मनुष्य की हउमै का नाश होना सम्भव है ।**

(3) मुक्ति

मनुष्य और मुक्ति कोएक दूसरे से विच्छेद करके नहीं देखा जा सकता । मुक्ति या मोक्ष की प्राप्ति मनुष्य के प्रमुख उद्देश्य के तौर पर प्रत्येक धर्म का मुख्य उपदेश रहा है। गुरू ग्रंथ साहिब में मुक्ति का संकल्प नया ही नहीं, विलक्षण भी है । गुरू ग्रंथ साहिब में स्पष्ट है कि बेशक सिक्ख धर्म का मूल लक्ष्य मनुष्य को जन्म मरण

के चक्कर से मुक्त करके सदा के लिए परमात्मा में लीन कर देना है लेकिन इसकी प्राप्ति तक पहुंचने का मार्ग एवं युक्ति बिल्कुल स्वतन्त्र है ।

गुरू ग्रंथ साहिब में मुक्ति के साथ 'जीवन' शब्द भी आता है । इसका अर्थ है अपने जीवन में ही मुक्त होना । यह 'मत को जाणै जाइ अगै पाइसी' का नवीन सिद्धांत है। भाव समाज में रहते हुए साँसारिक वासनाओं तथा हउमै का नाश करके अपने आप को परमात्मा के नाम में लीन कर देना और सारी लोकाई को परमात्मा का रूप समझ कर पूरी कायनात के भले के लिए कर्म करते हुए जीवन व्यतीत करना, ऐसे मनुष्य को गुरू ग्रंथ साहिब में 'जीवन मुक्त' प्रवान किया गया है।

जीवन मुकति सो आखीऐ मरि जीवै मरीआ ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 449)

इसका निष्कर्ष यह निकाला है कि सिक्ख ने इस सँसार में रहते हुए कमल जैसी निर्लेप जिन्दगी व्यतीत करते हुए कर्मशील रहना है ।

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे।। (गु. ग्रं. सा. अंग 938)

गुरमति अनुसार यह सँसार सच्चा है, इसीलिए मनुष्य का निशाना इस सामाजिक जीवन से निजात पाना नहीं है बल्कि आत्मिक व नैतिक जीवन जीने की चुनौती को स्वीकार करना है ।

मुक्ति सिक्ख के जीवन का हिस्सा है, इसीलिए मानव जीवन सेवा के माध्यम से अकाल पुरख के घर में स्वीकार हुआ माना जाता है । गुरू फरमान है -

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ ।। ता दरगह बैसणु पाईऐ ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 26)

मुक्त जीव ही 'बेगमपुरा' की स्थापना हित कार्यशील हो सकता है । सिक्ख धर्म के जीवन मुक्त जीव को 'खालसा' की संज्ञा से निवाजा गया है ।

खालसा सोइ जो करै नित जंग ।।
खालसा सोइ जो चढ़ै तुरंग ।।

(4) मन

'मन' शब्द सँस्कृत के 'मनश' से बना है जिसका अर्थ है सारी दिमागी ताकतें, ज्ञान शक्तियाँ । गुरूग्रंथ साहिब में मन का वर्णन चित, बुद्धि व अंतहकरन के अर्थो में किया गया है । गुरू नानक पातशाह मन की तुलना उस पक्षी से करते हैं जो शरीर रूपी वृक्ष पर बैठा हुआ है । यह पक्षी हर समय उड़ाने भरने के लिए तैयार रहता है । यह पक्षी (मन) पाँच इन्द्रियों का समूह है । यह सभी इन्द्रियां मिल कर असल तत्त्व की चोग चुगें तो इस पक्षी को कोई बंधन नहीं पड़ता ।

यह मन बहुत चंचल है, लोचन शक्ति रखता है तथा कभी कुछ चाहता है व कभी कुछ । चंचल होने के कारण यह जल्दी काबू में नहीं आता । इसके प्रभाव में जीवन अपने असल तत्त्व को भूल जाता है, परम तत्त्व को बिसार देता है । जब मन भीतर स्थिति परमात्मा की ज्योति पर ध्यान लगाता है तो गुरूकी कृपा से मन का चंचलपन खत्म हो जाता है, यह स्थिर हो जाता है और इसे पता लग जाता है कि -

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 441)

गुरू ग्रंथ साहिब में मन के दो रूप स्वीकार किएगए हैं । एक वह प्रकाशमयी मन है जो शुभ कर्म करता है व गुरू की दीक्षा लेता है । दूसरा वह अंधकारमयी मन है, जो लोभी व मूर्ख है तथा हमेशा अशुभ कर्म करता

है। सवाल उठता है कि इस अंधकारमयी मन को किस तरह प्रकाशमयी मन में तबदील किया जाए, अर्थात मन पर किस तरह काबू पाया जाए कि वह परमात्मा की इच्छा के अनुसार काम करे ?

गुरू ग्रंथ साहिब में मन को मारने के कुछ उपायों का वर्णन किया गया है । पहला, मन के द्वारा मन को मारना । भाव प्रकाशमयी मन द्वारा अंधकारमयी मन को अपने अधीन कर लेना । इस अधीनता के नतीजे के तौर पर मन की सभी कामनाएं व वासनाओं पर अंकुश लग जाता है, मन परमात्मा में लीन हो जाता है और उसका चंचलपन समाप्त हो जाता है ।

सुभर भरे नाही चितु डोलै मन ही ते मनु मानिआ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1233)

दूसरा उपाय है परमात्मा के गुणगान करने से मन को मारना । तीसरा उपाय है गुरू की दीक्षा द्वारा मन को मारना । इसके इलावा कुछ अन्य उपायों का संकेत भी गुरू ग्रंथ साहिब में मिलता है, जैसे दुर्जनों की कुसंगत का त्याग तथा साध संगत का आसरा । मन को समझने का एक और उपाय बताया गया है सच आचार । सत्य व्यवहार के द्वारा जीव मन को साध कर आनन्दित अवस्था में ला सकता है ।

सचहु ओरै सभु को उपरि सचु आचारु ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 62)

(5) गृहस्थ मार्ग

गुरू ग्रंथ साहिब ने प्रचलित कोरे ज्ञान मार्ग, कर्म मार्ग व अन्य योग जैसी कठिन साधनायें जो गृहस्थी जीवन को नकारती है, को रद्द करते हुए इनसे पैदा होने वाली कठोर व कठिन धार्मिक चेतना को त्यागने की प्रेरणा दी । साथ ही मानवता को गृहस्थी का नया दार्शनिक संकल्प देकर उसके महत्व को रूपमान कर दिया ।

नगन फिरत जौ पाईऐ जोगु ॥ बन का मिरगु मुकति सभु होगु ॥
किआ नागे किआ बाधे चाम ॥ जब नही चीनसि आतम राम ॥ रहाउ ॥
मूड मुंडाए जौ सिधि पाई ॥ मुकती भेड न गईआ काई ॥
बिंदु राखि जौ तरीऐ भाई ॥ खुसरै किउ न परम गति पाई ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 324)

गुरमति ने लोगों को इस धार्मिक नवचेतना का भागीदार बनाया कि परमात्मा में सुरति टिकाने के लिए घर-बार गृहस्थ को छोड़ कर जँगलों में जा कर तप तथा शरीर को अनेक प्रकार के कष्ट देना बेकार है। मनुष्य गृहस्थ में रह कर ही अपनी असलीयत की पहचान कर सकता है और परमात्मा में ध्यान जोड़ सकता है । लोगों के मनों में यह चेतना विकसित हो गई कि रोजाना ज़िन्दगी के साधारण काम भी उतने ही महत्वपूर्ण है जितना कि सन्यासी जीवन की पवित्रता । मनुष्य जीवन का असल ध्येय कमजोरियों से डर कर भागना नहीं, बल्कि उनके ऊपर सरदारी प्राप्त करके असल की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहना है, इसीलिए सँसार में रह कर गृहस्थ के सभी कार व्यवहार भली प्रकार निभाने धर्म जितने ही जरूरी है ।

नानक सतिगुरि भेटिऐ पूरी होवै जुगति ॥
हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ विचे होवै मुकति ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 522)

इस तरह गृहस्थ जीवन में गुरू ग्रंथ साहिब का यह दार्शनिक उपदेश बन गया जिसने वैदिक धर्म के गृहस्थ विरोधी दार्शनिक उपदेश को निरर्थक सिद्ध कर दिया ।

3. सामाजिक सरोकार

धर्म व समाज का अटूट सम्बन्ध है । धर्म सामाजिक विधि विधान के लिए और समाज को नैतिक नियमों पर चलने के लिए सिद्धान्त प्रदान करता है । समाज की केन्द्रीय ईकाई मनुष्य है । समाज के निर्माण में अच्छे कर्त्तव्यों वाले मनुष्य प्रमुख भूमिका निभाते हैं । अच्छे मनुष्य बनने के लिए धर्मी होना लाजमी हो जाता है । जब मनुष्य धर्म को छोड़ अधर्म का रास्ता चुन लेता है तो समाज अपनी नीवों में गरकना शुरू हो जाता है । समाज की पुर्नरचना के लिए ही धर्मो का प्रकाश दुनिया में हुआ ।

भारत की धरती पर जब स्वयं धर्मो ने मनुष्य को रसातल की ओर धकेलना शुरू कर दिया तो दंभ, पाखंड व शोषण का बोलबाला हो गया । उस समय सिक्ख धर्म का प्रकाश पँजाब में हुआ । सिक्ख धर्म के आगमन से दंभी व काली बदरूहों के हृदय कांप उठे लेकिन मर चुकी मानवता के भीतर जीने की आशा उठी । सिक्ख धर्म ने परम्पारिक शोषणकारी सिद्धांतों को अस्वीकार ही नहीं किया बल्कि इनको गिरा कर एक नए समाज की सृजना की जिसकी बुनियाद बराबरी, भाईचारा व मुक्ति के सिद्धांतों के ऊपर टिकी हुई थी । इस संदर्भ में हम गुरूग्रंथ साहिब के उन उपदेशों व सिद्धांतों को देखने का प्रयत्न करेंगे जिन्होंने एक नये इतिहास को नई सुर्ख स्याही से लिख कर लोक मानसिकता में मनुष्य को मनुष्य कहलवाने का अधिकार प्रदान किया ।

(1) मनुष्य समानता

गुरू ग्रंथ साहिब का उपदेश है -

मंदा किस नी आखीऐ जाँ सभना साहिबु इकु ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1238)

लेकिन सिक्ख धर्म के आमन के समय पँजाबी समाज दो भागों - हिन्दू व मुसलमानों में बंटा हुआ था । दोनों एक दूसरे से नफरत करते थे, धार्मिक गिलानी अपने शिखर पर थी तथा पाप व भ्रष्टाचार का बोलबाला था । लोग धर्म ज्ञान से टूट चुके थे और अज्ञानता का अंधेरा चारों तरफ फैला हुआ था । सिक्ख सिद्धांतों ने इस पाखंडी प्रबंध की खुले तौर पर निन्दा ही नहीं की बल्कि 'ना को हिन्दू ना मुसलमान' के सिद्धांत के ऊपर बराबरी के आधार पर समाज की सृजना का सपना लिया । इस सपने की ताबीर के लिए उपदेश गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं तथा उसके आधार पर उसारे गए समाज की गाथा का ब्यान, इस सिद्धांत पर उसरी सँस्थाएं मीरी-पीरी, अकाल तख्त व खालसा सृजना करती है । यह धर्मो, जातों से ऊपर उठकर एक ऐसे प्रबंध की ओर संकेत था जहाँ धर्म, जाति के आधार पर कोई भेदभाव हो ही नहीं सकता था बल्कि मनुष्य समानता का झंडा बुलन्द करते हुए उपदेश दिया -

जाति बरन कुल सहसा चूका गुरमति सबदि बीचारी ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1198)

इन सँस्थाओं में कोई भी अपनी इज्जत आबरू की रक्षा के लिए हाज़िर हो सकता था और उसके दुखों की निवृति के लिए गुरू ग्रंथ साहिब के उपदेशों से ओत-प्रोत सूरमें दूसरों के दुख दूर करना अपने गुरू का हुक्म स्वीकार करते थे । ऐतिहासिक प्रेक्ष्य में अनेक उदाहरणें इसकी पुष्टि करती है । गुरमति सारे जीवों को एक परमात्मा का पैदा किया मानती है ।

अवलि अलह नूरु उपाइआ कूदरति के सभ बंदे ॥
इक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1349)

(2) औरत का सम्मान

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में मनुष्य का जन्म से ही बराबरी का जो सिद्धांत दिया गया है, वह है 'हरि तुम महि जोत रखी ता तू जग महि आइआ' । इसमें यह नहीं कहा गया कि पुरूष जग में आया या स्त्री जग में आई । गुरू उपदेश है कि प्रभु से जुड़ने के लिए स्त्री या पुरूष होने की कोई शर्त नहीं है । मनुष्य जाति, जन्म या स्त्री पुरूष होने के कारण बड़ा या छोटा नहीं है । मनुष्य अपने अमल के कारण छोटा या बड़ा होता है ।

सिक्ख धर्म के संस्थापक गुरू नानक देव जी 'आसा की वार' में (जिसका प्रसंग धार्मिक, सामाजिक व राजनीतिक भी है) स्त्री के बारे में व्याख्यान करते हैं कि स्त्री द्वारा ही सँसार चलता है क्योंकि वह सन्तान को जन्म देती है । सँसार में गृहस्थ स्त्री द्वारा ही आगे चलता है । फिर स्त्री को मंदा (बुरा) क्यों कहा जाए जो राजाओं, महाराजाओं की जननी है । सारा सँसार स्त्री द्वारा जन्म लेता है । केवल वाहिगुरू ही है जो स्त्री से बाहर है । गुरू फरमान है –

भंडि जंमीऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु ।।
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ।।
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बंधानु ।।
सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 473)

सिक्ख धर्म के ऐतिहासिक प्रसंग में भी औरतों ने संग्रामिक भूमिका अदा की है । माता खीवी, माता गूजरी, माई भागों का अपना एक अलग प्रसंग है । माता खीवी को लंगर जैसी संस्था का मुखिया बना कर गुरू नानक पातशाह के सिद्धांत को अमल में तबदील कर दिया । उस वक्त के समाज में यह इस तरह का इन्कलाबी कदम था जिसने भारतीय धर्म प्रबंध की दीवारें हिला दी । माता गूजरी द्वारा अपने बच्चों को संग्राम की ओर अपने हाथों से तैयार करके भेजना और माई भागों का लाखों दुश्मनों से जूझ कर शहादत का जाम पीना सिक्ख धर्म में औरत के स्थान का प्रसंग अपने आप स्थापित कर देता है ।

खालसा की सृजना के समय औरत के नाम के साथ 'कौर' शब्द लगाने का अपना विलक्षण आध्यात्मिक प्रसंग है । 'कौर' का भाव है कुंवर । कुंवर उसके लिए प्रयोग किया जाता है जो राजा के पश्चात् गद्दी का अधि कारी होता है । सिक्ख धर्म के अनुसार दो शक्तियां हैं जो सृजना कर सकती है, उनमें एक प्रभु है तथा दूसरी औरत है, इसीलिए औरत प्रभु का कुंवर है जो ईश्वरीय बादशाहत में दूसरे नम्बर की अधिकारी है ।

(3) कर्म –काण्ड सामाजिक बुराई के तौर पर

सिक्ख धर्म के आगमन के समय अन्याय व कर्मकांडों का नंगा नाच शिखर पर था । जनसाधारण साहसहीन हो चुका था । श्राद्धों की महत्त्वता, सूतक, भिट्ट एवं ब्राह्मणों के आडंबर जीवन बन चुका था । सिक्ख गुरू साहिबान ने सर्वप्रथम इन बुराईयों के विरूद्ध आवाज़ ही नहीं उठाई बल्कि इन्हें भ्रमजाल की संज्ञा देकर लोगों को सचेत किया कि इस कर्मकांडी आडंबर का सामाजिक या धार्मिक जीवन में कोई अहमियत नहीं है । असल में यह पुजारी की कपट चाल है जो मनुष्य को ऐसे चक्करों में उलझा कर अपनी रोटी का पक्का प्रबंध करके बैठा है । गुरू ग्रंथ साहिब जी में श्राद्ध को निरर्थक कर्म बताया गया है व समझाया गया है कि तेरे साथ तेरे कर्म जाने हैं । श्राद्ध पर व्यंग करते हुए कहा गया है कि अगर धन चोरी करके श्राद्ध कराए जाएं तो पित्तरों के लिए भी समस्या खड़ी हो सकती है। गुरू फरमान है –

जे मोहाका घरु मुहै घरु मुहि पितरी देइ ॥
अगै वसतु सिञाणीऐ पितरी चोर करेइ ॥
वढीअहि हथ दलाल के मुसफी इह करेइ ॥
नानक अगै सो मिलै जि खटे घाले देइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 472)

इसी प्रकार मौत के अवसर पर पुरोहितों द्वारा चलाई सूतक प्रथा को गुरू ग्रंथ साहिब का उपदेश पूर्ण तौर पर नकारता है व हुक्म करता है कि जन्म, मौत, खाना, पीना आदि सभी कुछ अकाल पुरख के हुक्म अधीन है, इसीलिए सभी कुछ पवित्र है –

सभो सूतकु भरमु है दूजै लगै जाइ ॥
जंमणु मरणा हुकमु है भाणै आवै जाइ॥
खाणा पीणा पवित्रु है दितोनु रिजकु संबाहि ॥
नानक जिनी गुरमुखि बुझिआ तिना सूतकु नाहि ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 472)

गुरू साहिबान ने कर्मकांडों के अलावा कर्मकांड करने वालों के चेहरे से नकाब हटाने की हर कोशिश की ।

मथै टिका तेड़ि धोती कखाई ॥ हथि छुरी जगत कासाई ॥
नील वसत्र पहिरि होवहि परवाणु ॥ मलेछ धानु ले पूजहि पुराणु ॥
अभाखिआ का कुठा बकरा खाणा ॥ चउके उपरि किसै न जाणा ॥
दे कै चउका कढी कार ॥ उपरि आइ बैठे कूड़िआर ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 472)

गुरू ग्रंथ साहिब का उपदेश इनके भीतर छिपे दंभी चेहरे को और भी खूबसूरती से नंगा करता है –

पड़ि पुसतक संधिआ बादं ॥ सिल पूजसि बगुल समाधं ॥
मुखि झूठ बिभूखण सारं ॥ त्रैपाल तिहाल बिचारं ॥
गलि माला तिलकु लिलाटं ॥ दुइ धोती बसत्र कपाटं ॥
जे जाणसि ब्रहमं करमं ॥ सभि फोकट निसचउ करमं ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 470)

गुरू पातशाह जनसाधारण को सुचेत करते हैं कि यह आडंबरी जीवन मुक्ति दिलाने के समर्थ नहीं है और यह मुक्तिदाता बने पुजारी असल में ढोंगी या पाखंडी है । अकाल पुरख के दर पर बिचौलियों की आवश्यकता नहीं है । मनुष्य सदगुणों का धारणी हो कर उसकी निगाह में प्रवान हो सकता है ।

गुरमति व्रत रखने के बारे में भी जोरदार खंडन करती है

छोड़हि अन्नु करहि पाखंड ॥ ना सोहागनि ना ओहि रंड ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 873)

(4) सुच्च–भिट्ट सामाजिक बुराई के तौर पर

सूचे एहि न आखीअहि बहनि जि पिंडा धोइ ॥
सूचे सेई नानका जिन मनि वसिआ सोइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 472)

भारतीय धर्म में ब्राह्मण की ओर से सुच्च, भिट्ट का ऐसा ताना–बाना बुन लिया गया कि मानवता के सरोकार को हमेशा हमेशा के लिए गहरी कब्र में दफना दिया । तथाकथित नीची जाति के कहे जाते शूद्र व्यक्ति के स्पर्श को अपवित्र करार ही न दिया बल्कि ना–माफ करने योग्य गुनाह बना दिया । सिक्खव धर्म ने सर्वप्रथम ब्राह्मण पुजारी वर्ग के इस दंभ को नंगा ही नहीं किया बल्कि उसकी प्रमुखता पर प्रश्न चिन्ह खड़ा करके हज़ारों वर्ष से खड़े इस शोषण के माहौल को तहस नहस कर दिया । इस धर्म के संस्थापक ने नीचों में भी उस कादर का जलवा देखा तथा स्वयं को उनके संग–साथ की बात करते हुए उपदेश दिया –

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ।।
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ।।
जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बरवसीस ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 15)

हिन्दुस्तान की धरती पर निचला वर्ग हमेशा पैरों में कुचला गया । सिक्खवधर्म के इस ऐलान नामे ने नये प्रसंग स्थापित किए। हिन्दुस्तान की धरती पर एकनई सुबह ने अंगड़ाई ली । यह अंगड़ाई बराबरी की थी, 'सरबत के भले' की थी तथा सुच्च–भिट्ट पर टिके शोषणकारी समाज को तहस–नहस करने की थी। सिक्खव धर्म ने ऊँच–नीच मानने वालों को चुनौती ही नही दी बल्कि उनके समक्ष एक नया प्रश्न खड़ा कर दिया व कहा –

माता जूठी पिता भी जूठा जूठे ही फल लागे ।।
आवहि जूठे जाहि भी जूठे जूठे मरहि अभागे ।।
कहु पंडित सूचा कवनु ठाउ ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1195)

इस उपदेश ने पंडित की अजारेदारी को जर्जर ही नहीं किया बल्कि मानवता की 'बन्द खलासी' का एक नवीन इतिहास आरम्भ कर दिया ।

(5) अंतर धर्म संवाद

भारतीय धर्म दर्शन तो क्या समूह सँसार के धर्मदर्शन में से संवाद का पवित्र व उत्तम सिद्धांत तथा मिल बैठने का सामाजिक सरोकार पूर्णतया गुम है । इसका नतीजा पूरे सँसार के लिए बहुत बुरा निकला । धर्म शांति की जगह दंगाई रूप धारण कर गया । 'मेरा प्रभु, मेरा धर्म व मेरा समाज ही सर्वश्रेष्ठ व उत्तम है' के संकल्प ने धर्म, मनुष्य तथा समाजों में सदीवी बंटवारा कर दिया । विरोध के ऐसे पहाड़ खड़े हो गए कि मिल बैठने की संभावनाओं का नामोनिशान मिट गया । सिक्खव धर्म ने इसके विरोध में सर्वप्रथम उपदेश दिया 'हम नहीं चंगे बुरा नहीं कोइ' तथा इस सिद्धांतक प्रसंग की स्थापित कर संवाद का एक ऐसा नारा बुलंद किया जो विरोधों को मिटाता ही नहीं बल्कि एक नयी स्थिति को जन्म भी देता है । गुरू हुक्म है –

जब लगु दुनीआ रहीऐ नानक किछु सुणीऐ किछु कहीऐ ।।
भालि रहे हम रहणु न पाइआ जीवतिआ मरि रहीऐ ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 661)

गुरू ग्रंथ साहिब के इस पवित्र ऐलाननामे ने सिक्खव धर्म की भावना को स्पष्ट कर दिया कि सिक्खवी का अर्थ धर्म तबदीली ही नहीं बल्कि हर मनुष्य को उसके धर्म के सच्चे पहिलुओं का अहसास भी कराना है । यह तब ही संभव है अगर मिल बैठने की संभावना पैदा हो । अपना अच्छा दूसरों को बताना व दूसरे के अच्छे को प्रवान करने का जिगरा हो ।

इस सिद्धांत को अमल में तबदील करने हेतु गुरू नानक पातशाह नेदेश प्रदेश की यात्राएं की । यात्राओं के

दौरान दुनिया भर के धर्मों के विद्वानों से संवाद रचाया। नए प्रसंग स्थापित किए तथा इन प्रसंगों ने साँसारिक वलगणों को समाप्त करते हुए 'एक पिता एकस के हम बारिक, तू मेरा गुर हाई' का नया प्रसंग स्थापित कर आने वाले समय की ओर संकेत कर दिया ।

4. राजनीतिक सिद्धांत

सिक्ख धर्म के आरम्भ के समय राजनीतिक ताकत का केन्द्रीय धुरा समय का बादशाह था। बादशाही ढांचे को परमात्मा की पूर्व स्वीकृति का सबूत माना जाता था । नतीजे के तौर पर समय का बादशाह अपनी धर्मविहीन असीम शक्तियों का दुरूपयोग करने के कारण विलासी हो गए थे । उनका जीवन 'सेज सुखाली' एवं 'भोग विलास' तक ही सीमित हो कर रह गया था -

तुरे पलाणे पउण वेग हर रंगी हरम सवारिआ ।।
कोठे मंडप माड़ीआ लाइ बैठे करि पासारिआ ।।
चीज करनि मनि भावदे हरि बुझनि नाही हारिआ ।।
करि फुरमाइसि खाइआ वेखि महलति मरणु विसारिआ ।।
जरु आई जीबनि हारिआ ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 472)

लोग राजा को प्रभु का ही दूसरा रूप मानने के लिए मजबूर कर दिये गये थे । लोग किसी भय अधीन राजा के हर शब्द को कानून का दर्जा देते हुए चुप थे लेकिन सिक्ख गुरू साहिबान ने उन सभी मान्यताओं का विरोध किया जो लोक हितों के विरूद्ध कार्य कर रही थी । उन्होंने हर सँस्था को अपनी बाणी द्वारा चुनौती दी । जिन राजाओं से लोग डरते थे, उनके कुकर्मो को लोगों के सामने नंगा करके लोक विश्वास को तबदील करने की जो भूमिका गुरू साहिबान ने निभाई थी, उससे राजा झूठे, निर्दयी तथा कुलीन लोग अभिमानी सिद्ध हो गए थे -

महर मलूक कहाईऐ राजा राउ कि खानु ।।
चउधरी राउ सदाईऐ जलि बलीऐ अभिमान ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 63)

राजाओं के विरूद्ध धर्म के इतिहास में यह बिल्कुल नई बात थी । इस प्रकार सिक्ख सिद्धांत ने जन साधारण के मनों में 'परवाह नाही किसे कैरी' वाली मानसिकता उजागर कर दी थी । गुरू ग्रंथ साहिब में राजाओं व कुलीन वर्ग को लब, रक्त पीने वाले, कूड व कुत्ते कह कर संबोधन किया गया है और कहा है कि राजा जो प्रजा का शोषण करता है, वह अधर्मी है । धर्मी राजा के लिए न्याय की धुरी होना आवश्यक है । अगर राजा ने लोगों से ज्यादा माया में मोह डाल लिया है तो लोगों के मनों में भी उसके लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए । सिक्ख सिद्धांत में किसी प्राप्ति की लालसा या अप्राप्ति का सहम नहीं था । राजा व अहलकारों को खरी खरी सुनाने वाले गुरू साहिबान सम्पूर्ण रूप से भयमुक्त थे ।

सिक्ख गुरू साहिबान ने सिद्धांत रूप में जो प्रसंग दिया, उसका अमली प्रकाशन अपनी शहादतें दे कर अमल में ढ़ाला । गुरू पातशाह की शहादतों ने भय रहित जुझारूओं की कतारें लगा दी और जिस रास्ते पर गुरू चले, उसी रास्ते पर चलने से सिक्ख क्यों डरे । सिक्ख सिद्धांत ने जनसाधारण में ऐसी जान फूंकी, जिसमें न खोपड़ियां उतरवाने वालों की कमी थी और न ही अंग अंग कटवने वालों की ।

सिक्ख धर्म ने एक ऐसे समाज की नींव रखी जिसके ऊपर धर्म का कुंडा था । वह कुंडा, जिसे अकाल तख्त साहिब के नाम से जाना जाता है, जिसके शाही फरमान के आगे हर सिक्ख विनम्र होकर हाज़िर हो जाता

है चाहे वह राजा हो या रंक ।

5. नैतिक उपदेश

श्री गुरू ग्रंथ साहिब की विलक्षणता यह है कि इसमें 'धर्म' शब्द का जो प्रयोग किया गया है, वह किसी विशेष मत की ओर इशारा नहीं करता बल्कि धर्म शब्द नैतिकता व सदाचार गुण के रूप में प्रयोग किया गया है । इसके साथ ही बहुत खूबसूरत व्याख्यान है कि अगर समाज में से धर्म लुप्त हो जाए भाव अवगुण भारी हो जाएं तो समाज को चलाने वाले कसाई हो जाते हैं तथा नैतिक विहीन समाज का ताना-बाना उलझ जाता है । गुरू उपदेश है -

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ ॥
कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 145)

स्पष्ट है कि गुरू ग्रंथ साहिब समाज को एक ऐसा आधार मानता है जहां मनुष्य धर्म कमाने आता है । धर्म तब कमाया जाता है जब 'सांझ करीजै गुणह केरी' के उपदेश को धारण किया जाए । गुणों को धारण करना व अवगुणों को मारना ही समाज की सृजना का मूल आधार है । इस आधार की स्थापना के लिए कुछ नैतिक गुणों को संकल्पी रूप में यहां विचार लेना सार्थक होगा ।

(1) सच

हर धर्म के प्रकाशन का मूल आधार सच है । गुरू ग्रंथ साहिब इस समाज को दो धाराओं का संग्राम मानता है, एक धारा 'सच' की व दूसरी 'झूठ' की । सच का साथी बनने के लिए 'किव कूडै लूटै पालि' का प्रश्न है और साथ ही उत्तर है 'हुकम रजाई चलणा' भाव परमात्मा के हुक्म में चलना लेकिन परमात्मा के हुक्म से कैसे चला जाए अतथा इस रहस्य से पर्दा कैसे उठाया जाए ।

जपु जी साहिब इस पहेली को बूझने और जीवन में अंगीकार करने के लिए कुछ उत्तम गुणों का धारणी होने का उपदेश करता है । इनमें सब से उत्तम गुण सुनने को माना है । सुनना कइन कार्य है, इसीलिए अपने भीतर सहज का प्रकाश करना पड़ेगा । जिन्दगी में सहज उत्तम सदगुण है, अगर सहज पैदा हो गया तो सुनने की भावना पैदा हो जाएगी । यह भावना ज्ञान के मार्ग का राही बना देगी लेकिन राही बन जाने से ही प्राप्तियां नहीं होती हैं, राही बन कर सच की खोज के मार्ग पर चलना है । रहस्य बरकरार है, असली उपदेश है सुनना व फिर मानना । अगर सुनने के बाद अमल न किया जाए तो प्राप्तियों का अमल समाप्त है लेकिन अगर सुन कर मान लिया तो सच की प्राप्ति के अगले मार्ग पर चल पड़े जिसे 'पंच' कहा गया है । पंच का मार्ग कइन है, यह सच का पांधी बनना है । झूठ, दंभ, पाखंड का पर्दाफाश ही नहीं करना बल्कि इसके विरूद्ध संग्राम भी करना है । संग्राम जिन्दगी और मौत को एक जैसा समझता है तथा यह ही सचखण्ड की स्थापना का मील पत्थर है ।

(2) प्रेम

दुनिया में प्रेम सामाजिक, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, बैर के खात्मे का मूल आधार ही नहीं बनता बल्कि परमात्मा से मिलने का रास्ता भी निर्धारित करता है । मानवता से प्रेम, प्रभु से प्रेम की पहली सीढ़ी है । जब उसने यह कायनात या लोकाई की सृजना की तो उसने अपनी ज्योति इसमें रखी । जब मनुष्य में उसकी ज्योति है तो फिर उसे प्यार क्यों न किया जाए क्योंकि सच्चा प्रेम अकाल पुरख का वरदान है जो परमात्मा की बनाई इस सम्पूर्ण कायनात में मानने को प्राप्त है ।

गुरमति प्रेम के मार्ग को 'गाडी राह' स्वीकार करती है, जिसने 'लोक सुखीए परलोक सुहेले' का सच स्थापित करना है । प्रेम कोई सरल मार्ग नहीं है । प्रेम की आस्था व विश्वास में खतरे व दुख उठाने पड़ते हैं । इस आस्था में खोपड़ियां उतरवानी व अंग अंग भी कटवाने पड़ सकते हैं । केवल ज्ञान ही नहीं बल्कि सब कुछ अर्पण करना पड़ सकता है । प्रेम भावना में पीछे मुड़ने का रास्ता नहीं होता । जीवन नौका को जब प्रेम के सागर में धकेल दिया तो फिर किसी भी रूकावट का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता । फिर चाहे सज्जन प्रभु का घर दूर हो या राह में मोह माया व विष विकारों का कीचड़ हो । प्रीतम नेह की लालसा इन विघ्नों की प्रवाह नहीं करती ।

गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज बाबा फरीद जी की बाणी सवाल जवाब के रूप में प्रेम के प्रसंग को निराले रूप में स्थापित करती है –

फरीदा गलीए चिकडू दूरि घरु नालि पिआरे नेहु ।।
चला त भिंजै कंबली रहाँ त तुटै नेहु ।।

खूबसूरत उत्तर है –

भिजउ सिजउ कंबली अलह वरसउ मेहु ।।
जाइ मिला तिना सजणा लुटउ नाही नेहु।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1379)

स्पष्ट है कि गुरमति में प्रकम का उत्तम नैतिक गुण हथेली पर शीश रखने जैसा ही मार्ग है लेकिन प्रेम के उत्तम मार्ग पर जो चल पड़ा, वह प्रभु रूप हो जाता है, कुल कायनात उसके नाम का जाप करती है, उसको अंगीकार करने के लिए बेहाल हो उठती है । यह जीना 'भाई घनईया' हो उठता है । फिर भाई घनईया जैसे संकल्पी रूप की सुगंध व मिठास को छिपा कर रखना संभव ही नहीं है ।

स्पष्ट है कि प्रेम प्राप्तियों का मार्ग है । सामाजिक क्षेत्र में जहाँ इस से मुख उज्ज्वल व सभ्य समाज स्थापित होता है, वहीं रूहानी क्षेत्र में अकाल पुरख की प्राप्ति का मुख्य वसीला भी प्रेम को माना है । परमात्मा स्वयं प्रेम है और प्रेम ही जीवों की पालना व सब को गले से लगाने का आधार है ।

सारि समालै निति प्रतिपालै प्रेम सहित गलि लावै ।।
कहु नानक प्रभ तुमरे बिसरत जगत जीवनु कैसे पावै ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 617)

(3) सेवा

गुरू ग्रंथ साहिब के पवित्र उपदेश में इसे सदगुण के रूप में स्वीकार करते हुए मनुष्य जीवन के केन्द्रीय स्तम्भ के रूप में इसकी स्थापना की गई है । सिक्ख ऐतिहासिक प्रसंग में सेवा की इतनी महानता है कि 'लहिणे से अंगद होने' के सफर का माध्यम सेवा ही बना और इस तरह 'अमरू निथावे से निथाविआ दे थां' बनने में सेवा ने ही मुख्य भूमिका निभाई ।

स्पष्ट है कि सेवा प्रभु की राह पर चलने तथा प्रभु बनने का एक ही रास्ता है । सामाजिक जीवन में गुरू ग्रंथ साहिब का उपदेश है कि सेवा उद्यम के रास्ते की राह खोलती है । यह उच्च आचरण का आधार बनती है, सेवा ही नम्रता तक लेकर जाती है, इसी से ही समर्पण की भावना उजागर होती है । सहनशीलता का उत्तम सदगुण सेवा द्वारा ही रूपमान होता है । भाईचारक समन्वय व सामाजिक रूकावटों को तोड़ने में सेवा ही उत्तम हथियार है । यह सभी सदगुण सेवा के माध्यम द्वारा जब मनुष्य जीवन का अंग बन जाते हैं तो मनुष्य में परमात्मा वाले

उत्तम गुण पैदा हो जाते हैं, वह समूह कायनात को एक अकाल पुरख का जान कर उसका सत्कार करना शुरू कर देता है तथा निर्भय निरवेरी कीमतों का मालिक बन सेवा से सिमरन और सिमरन से शहादत तक के रास्तों को बिना भय पार कर परमात्मा को अंगीकार हो जाता है । गुरू फरमान है -

अनिक भाँति करि सेवा करीऐ ।। जीउ प्रान धनु आगै धरीऐ ।।
पानी परवा करउ तजि अभिमानु ।। अनिक बार जाईऐ कुरबानु

(गु. ग्रं. सा. अंग 391)

बिना स्वार्थ की हुई सेवा ही स्वीकार होती है और जीव को प्रभु की प्राप्ति होती है ।

सेवा करत होइ निहकामी ।। तस कउ होत परापति सुआमी ।।

(गु. ग्रं. सा. अंग 286)

प्रभु के चरणों में मन लगा कर की हुई सेवा ही सफल है -

सतिगुर की सेवा सफलु है जे को करे चितु लाइ ।।
मनि चिंदिआ फलु पावणा हउमै विचहु जाइ ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 644)

(4) निर्भयता

गुरू ग्रंथ साहिब में परमात्मा के गुणों का उल्लेख मूलमंत्र में किया हुआ है । इसमें अकाल पुरख का एक मीरी गुण 'निरभउ' है । निर्भय कौन हो सकता है, वह जो सर्वशक्तिमान हो लेकिन क्या यह गुण मनुष्य का गुण बन सकता है या नहीं । सिद्धांत इस बात की प्रौढ़ता करता है कि जीव में ही परम-आत्मा वाले गुण पैदा हो सकते हैं, बशर्ते कि वह सच, प्रेम व सेवा के रास्ते को धारण कर ले ।

सिक्ख धर्म का इस सिद्धांत में दृढ़ विश्वास है कि 'पत' यानी इज्जत के जीवन बगैर जीना बेगैरत हो कर जिन्दगी काटना है -

पति विणु पूजा सत विणु संजमु जत विणु काहे जनेऊ ।।

(गु. ग्रं. सा. अंग 903)

इस आध्यात्मिक प्रसंग में परिपक्व आदमी अपनी इज्जत-आबरू की रखवाली करने के समर्थ हो जाता है । इस विश्वास ने सिक्खों को आत्मनिर्भर होने वाली राह पर चलाया । गुरू ग्रंथ साहिब में यह भी विधान किया हुआ है कि पूजा व पत साथ साथ चलती है, अगर कोई संयमी कहलवाना चाहता है, उसके लिए सच्चा होना जरूरी है । यहाँ तक कि कोई न कोई धार्मिक कार्य किसी न किसी नैतिकता का सूचक होता है -

भै काहू कउ देत नहि, नहि भै मानत आन ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1427)

केवल ऐसे विश्वास वाला मानव ही भयमुक्त जीवन व्यतीत कर सकता है । भयमुक्त नैतिकता को सिक्ख धर्म में अमल के स्तर पर केन्द्रीयता स्वीकार है । गुरू ग्रंथ साहिब में इसे एक सीमा में स्वीकार करने का आदेश दिया है और जुल्म के विरूद्ध जूझने के लिए 'प्रेम खेलण का चाउ' मानता है ।

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ।। सरु धरि तली गली मेरी आउ ।।
इतु मारगि पैरु धरीजै ।। सिरु दीजै काणि न कीजै ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1412)

(5) संतोष

गुरबाणी संतोष के नैतिक गुण को मनुष्य के मन का हिस्सा बनाने का उपदेश देती है । गुरू फरमान है –

धौलु धरमु दइआ का पूतु ॥
तोखु थापि रखिआ जिनि सूति ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 3)

संतोष पैदा कैसे हो ? यह प्रश्न है तथा इसका उत्तर भी गुरबाणी में दिया हुआ है कि अगर मनुष्य संयमी वृत्तियों का धारक हो जाए तो संतोष एक नैतिक गुण के रूप में मनुष्य जीव का अंग हो जाता है । संतोष साँसारिक सुखों से भांजवादी स्वभाव नहीं है, बल्कि सांसारिक सुखों का प्रयोग करते हुए लगाम अपने हाथ में रखना है । अगर इच्छाएं सवार व मनुष्य घोड़ा बन जाएगा तो समाज विनाश की राह खुल जाएगी, इसीलिए उपदेश है –

सत संतोखि रहहु जन भाई ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1030)

नवाब कपूर सिंह के लिए नवाबी के कोई अर्थ नहीं है । उसके लिए तो खालसा सूरमाओं के घोड़ों की सेवा उत्तम नैतिक गुण है लेकिन जब हुक्म के रूप में उसे नवाब की खिलअत धारण करनी पड़ जाती है तो वह सिर नीचे करके प्रवान तो कर लेता है लेकिन जिस संयमी वृत्ति का प्रकटाव करता है, वह संतोष का उत्तम उदाहरण है । यह खालसा सूरमाओं के आगे हाथ जोड़ कर यह मनवा लेता है कि नवाबी के साथ साथ घोड़ों की सफाई की जिम्मेवारी का भार उसके सिर ही रहेगा । यह जहाँ उत्तम सेवा का गुण है, वहीं हउमै से छुटकारा पाने का उत्तम मार्ग भी है लेकिन इस उत्तम मार्ग पर केवल गुरू के पूरे-सूरे संतोषी जीव ही चल सकते हैं, इसीलिए गुरू ग्रंथ साहिब में संतोष को तीर्थ की संज्ञा प्रदान की गई है –

सचु वरतु संतोखु तीरथु गिआनु धिआनु इसनानु ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1245)

कुछ अन्य उपदेश

उपरोक्त प्रमुख सिद्धांतों के इलावा गुरू ग्रंथ साहिब में और भी बहुत महत्वपूर्ण उपदेश है जिनका मूलभाव मनुष्य को प्रभु के घर का राही बनाना है । उन सिद्धांतों को संक्षेप में देखने का प्रयत्न कर लेना प्रसंग युक्त होगा ।

किरत करना

सिक्ख धर्म के मूल तीन उपदेश हैं – नाम जपना, किरत करना व वंड छकना । किरत करनी से भाव है उपजीविका के लिए नेक कमाई करनी, जिसे आमतौर पर धर्म या 'दस नहुंआ' की कमाई भी कहा जाता है । गुरू नानक साहिब ने अपनी यात्राओं के बाद करतारपुर में अपने हाथों से खेतीबाड़ी की, हल चलाया, लंगर चलाए व जरूरतमंदों की मदद की । आप जी के वचन हैं –

घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥ नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1245)

साथ ही गुरू ग्रंथ साहिब के वचन हैं –

हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1376)

वंड छकना

अपने द्वारा की हुई किरत कमाई को वंड छकना (बाँट कर खाना) ही गुरमति में प्रवान है। गुरू साहिबान ने लंगर की प्रथा को शुरू करके 'वंड छकण' के सिद्धांत को अमली रूप दिया। लंगर में संगत एक ही पंक्ति में बैठ कर बिना किसी भेदभाव के बैठ कर प्रसाद लेती है। गुरमति इस बात का प्रतीक है कि जो कुछ हम दाते भोग रहे हैं, वह सभी उस दाता की दी हुई हैं -

तू दाता दातारु तेरा दिता खाणा ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 652)

इसीलिए गुरू साहिब उपदेश देते हैं -

खावहि खरचहि रलि मिलि भाई ॥
तोटि न आवै वधदो जाई ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 186)

सतिगुरू

सतिगुरू शब्द के अक्षरी अर्थ है सति गुरू भाव सच्चा गुरू।

सति पुरखु जिनि जानिआ सतिगुरु तिस का नाउ ॥
तिस कै संगि सिखु उधरै नानक हरि गुन गाउ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 286)

सतिगुरू नाम का भंडार है। जो जीव सतिगुरू की शरण में आ कर उसकी बताई हुई राह पर चलता है, सतिगुरू ऐसे जीव को नाम की दात बख्श देते हैं और उसका बेड़ा पार कर देते हैं यानी उसका जगत में आना सफल हो जाता है -

सतिगुरु बोहिथु हरि नाव है कितु बिधि चड़िआ जाइ ॥
सतिगुर कै भाणै जो चलै विचि बोहिथ बैठा आइ ॥
धन्नु धन्नु वडभागी नानका जिना सतिगुरु लए मिलाइ ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 40)

गुरबाणी

गुरू की उच्चारण की हुई बाणी को सच्चे की बाणी समझना चाहिए क्योंकि वह मालिक प्रभु स्वयं ही यह बाणी सतिगुरू के मुँह से कहलवाता है -

सतिगुर की बाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु ॥
हरि करता आपि मुहहु कढ़ाए ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 308)

इसीलिए सतिगुरू की बाणी सच्चे प्रभु का ही रूप है -

सतिगुर की बाणी सति सरूपु है गुरबाणी बणीऐ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 304)

गुरबाणी इस जगत में जीव को प्रकाश (चानण) प्रदान करता है और उसे जीवन मार्ग दर्शाते हैं। वे जीव अच्छे भाग्य वाले होते हैं जिनके भीतर गुरबाणी बसती है -

गुरबाणी इसु जग महि चानणु करमि वसै मनि आए ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 67)

परोपकार

परोपकार दो शब्दों का सुमेल है 'पर' व उपकार' । पर का अर्थ है दूसरा व उपकार का अर्थ है भलाई, मदद, नेकी । बिना किसी स्वार्थ या भेदभाव के जरूरतमंदों की सहायता करना परोपकार है ।

सब से बड़ा परोपकारी वह प्रभु स्वयं है, जिनकी कृपा से हमें यह मनुष्य जीवन मिला है और वह गुणहीनों को भी दातें बख्श रहा है -

परउपकारी सरब सधारी सफल दरसन सहजइआ ॥
कहु नानक निरगुण कउ दाता चरण कमल उर धरिआ ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 553)

वे परोपकारी हैं जो माया का मोह त्याग कर प्रभु का सिमरन करते हैं ।

प्रभ कउ सिमरहि से परउपकारी ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 263)

साथ ही विद्या एक अमूल्य धन है जिससे मनुष्य के भीतर अज्ञानता का अंधकार दूर होता है और विद्या ग्रहण करने वाले परोपकारी हैं क्योंकि परोपकारी का काम ही ज्ञान प्राप्त करके उसे दूसरों में बाँटना है -

बिदिआ वीचारी तां परउपकारी ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 366)

दूसरों की भलाई के बारे में सोचने वाले जीव जन्म मरण के चक्कर में नहीं पड़ते और वह जीवों को आत्मिक जीवन देकर प्रभु भक्ति में जोड़ कर उनके परमात्मा से मिला देते हैं -

जनम मरण दुहहू महि नाही ॥
जन परउपकारी आए ॥
जीअ दानु दे भगतती लाइनि हरि सिउ लैनि मिलाए ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 749)

सिमरन

सिमरन के अक्षरी अर्थ है याद, चेता या चिंतन । परमात्मा के गुणों को मन में बसा कर उन गुणों को निरंतर याद करना ही परमात्मा का सिमरन है ।

सिमरन सर्वगुण सम्पूर्ण प्रभु के गुणों की बारम्बार याद तथा प्रभु गुणों का संग्रह है, जो मुख को साथ शामिल करके या अकेले चित्त से भी किया जा सकता है ।

चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो,स्रवन बानी सुजसु पूरि राखउ ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 694)

सेवा व सिमरन सिक्ख धर्म के मूल सिद्धांत है । सिमरन द्वारा हृदय के बर्तन में संग्रहित किए प्रभु गुणों की, गुरू के हुक्म में रह कर, शुभ कर्मो द्वारा जरूरतमंद व दुखी लोकाई के भले के लिए प्रयोग करना ही असली सेवा है । निरंकार के सरगुण स्वरूप की भक्ति का नाम 'सेवा' है व 'सिमरन' उसके निरगुण स्वरूप की उपासना है -

हरि हरि सिमरहु अगम अपारा ॥
जिसु सिमरत दुखु मिटै हमारा ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 698)

सहज अवस्था

माया के तीन गुण -तमो, रजो व सतो, से ऊपर मन की एक चौथी अवस्था है जिसे सहज अवस्था का नाम दिया गया है -

चउथे पद महि सहजु है गुरमुखि पलै पाइ ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 68)

सहज अवस्था मन के पूरे टिकाव वाली अवस्था है जब सारी चिंताएं व लालसाएं खत्म हो जाती हैं - सुख सहज अरु धनो अन्नदा गुर ते पाइओ नामु हरी ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 822)

सहज अवस्था पर पहुंच कर जीव की सुरति मालिक प्रभु से जुड़ जाती है और उसकी भटकन खत्म हो जाती है । यह कोई बाहर से नज़र आने वाली वस्तु नहीं है, इसीलिए इसका आनन्द तो महसूस किया जा सकता है लेकिन इसका वर्णन नहीं किया जा सकता ।

गुरमुख

गुरमुख यह है जो गुरू के सम्मुख रहता है, गुरू के बताये हुए मार्ग पर चलता है तथा गुरू के शब्द की कमाई करके प्रभु के चरणों में ध्यान को जोड़ रखता है । गुरू नानक देव जी ने 'सिध गोसटि' की 73 पउड़ियों में 15 पउड़ियां केवल गुरमुख पर ही उच्चारण की है । गुरमुख किसी से बैर-विरोध नहीं करता और वह प्रभु से नाता जोड़ कर केवल स्वयं ही इस भवसागर से पार नहीं होता बल्कि दूसरों को भी पार उतारा करता है ।

गुरमुखि वैर विरोध गवावै ।। गुरमुखि सगली गणत मिटावै ।। **(गु. ग्रं. सा. अंग 942)**

गुरमुखि तारे पारि उतारे ।। नानक गुरमुखि सबदि निसतारे।। (गु. ग्रं. सा. अंग 941)

गुरू ग्रंथ साहिब में गुरमुख के साथ को बड़प्पन दिया गया है कि उससे दोस्ती करके जीव के जन्ममरण का दुख काटा जाता है और वह आत्मिक आनन्द की प्राप्ति करता है -

गुरमुख सउ करि दोसती सतिगुर सउ लाइ चितु ।।
जंमण मरण का मूलु कटीऐ ताँ सुखु होवी मित ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1421)

मनमुख

मनमुख वह है जो अपने मन के पीछे लग कर चलता है और गुरमति के विपरीत चलता है, इसीलिए ऐसे लोगों से मेलमिलाप का कोई लाभ नहीं तथा उनसे बिछुड़ना ही अच्छा है ।

नानक मनमुखा नालो तुटी भली जिन माइआ मोह पिआरु ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 314)

सहनशीलता

सहनशीलता से भाव है सहन या बर्दाशत करने की शक्ति, हर समय धैर्य व सब्र बनाए रखना । इस गुण के कारण मन सदा शांत व अडोल रहता है । यह एक ऐसा गुण है जिससे प्रभु को खुश किया जा सकता है -

निवणु सु अखरु खवणु गुणु जिहबा मणीआ मंतु ।।
ए त्रै भैणे वेस करि ताँ वसि आवी कंतु ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1384)

इससे जीव का मानसिक संतुलन बना रहता है व हृदय रूपी घर में शांति आ बसती है । इस अवस्था के जीव परमात्मा के दिए सुख या दुख को सदा ही सुख समझकर मानता है -

प्रभ तुम ते लहणा तूं मेरा गहणा ॥
जो तूं देहि सोई सुखु सहणा ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 106)

आनंद

आनंद से भाव है आत्मिक उल्लास । यह उल्लास स्थायी होता है और इसकी प्राप्ति तब होती है जब प्रभु की बख्शीश के कारण जीव सत्संगत में गुरबाणी श्रवण करने के लिए जुड़ता है –

साधसंगि जउ तुमहि मिलाइए तउ सुनी तुमारी बाणी ॥
अनदु भइआ पेखत ही नानक प्रताप पुरख निरबाणी ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 614)

गुरू अमरदास जी की बाणी 'अनंदु' इसी बात का प्रतीक है । गुरसिक्ख सदा 'चढ़दी कला' में रहता है क्योंकि उसकी मंजिल का निशाना सच्चे गुरू द्वारा दर्शाए हुई राह पर चलते हुए सतिगुरू को मिलकर आनन्द की प्राप्ति करना ही है –

अन्नदु भइआ मेरी माए सतिगुरू मै पाइआ ॥
सतिगुरू त पाइआ सहज सेती मनि वजीआ वाधाईआ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 917)

इसीलिए सिक्ख के हर कार्यक्रम की समाप्ति पर इस 'अनँदु' बाणी में से छह पउड़ियों का पाठ किया जाता है । गुरू जी के बताये हुए मार्ग पर चलकर ही आनन्द की प्राप्ति हो सकती है और हृदय घर में आत्मिक आनन्द बसने से जीव की सारी भटकना समाप्त हो जाती है –

अनदु सुणहु वडभागीहो सगल मनोरथ पूरे ॥(गु. ग्रं. सा. अंग 922)

अमृत

अमृत से भाव है वह पदार्थ जिसके सेवन करने से प्राणी अमर हो जाता है और फिर उसे कभी आत्मिक मौत नहीं आती ।

प्रभु का नाम ही सारे सुखों का खजाना है और इस अमृत जल को पीने से माया की सारी भूख उतर जाती है ।

नानक अमृत नामु सदा सुखदाता ॥
पी अमृतु सभ भुख लहि जावणिआ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 119)

प्रभु का अमृत नाम सभी चिन्ताओं को दूर करने वाला है –

अमृतु पीवहु सदा चिरु जीवहु हरि सिमरत अनद अन्नता ॥
रंग तमासा पूरन आसा कबहि न बिआपै चिंता ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 496)

गुरबाणी अमृतरूपी बचनों से भरपूर है और जो गुरू ग्रंथ साहिब के 'चरनी' लग जाता है, भाव गुरबाणी पढ़ता है, वह जीव आत्मिक जीवन देने वाले नाम रूपी अमृत को ही पीता है –

अमृत बचन सतिगुर की बाणी ॥
जो बोलै सो मुखि अमृतु पावै ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 494)

धर्म

सब से उत्तम व श्रेष्ठ धर्म है, प्रभु का नाम जपना व शुभ कर्म करने -

सरब धरम महि स्रेसट धरमु ॥

हरि को नामु जपि निरमल करमु ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 266)

दया

किसी दुखी जीव के दुख का अनुभव करके उससे सहमति प्रकट करना, उसके दुख को दूर करने का प्रयत्न करना और दुख के समय उसकी मदद या सेवा करना ही दया या करूणा है ।

सचु ता परु जाणीऐ जा सिख सची लेइ ॥

दइआ जाणै जीअ की किछु पुंनु दानु करेइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 468)

मीठा बोलना

गुरू ग्रंथ साहिब का उपदेश है कि जीव को हमेशा मीठा बोलना चाहिए क्योंकि उसका परमात्मा सदा मीठा बोलता है -

मिठ बोलड़ा जी हरि सजणु सुआमी मोरा ॥

हउ संमलि थकी जी ओहु कदे न बोलै कउरा ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 784)

मीठा बोलने वाले को हर जगह सत्कार मिलता है । गुरबाणी में मिठास और नम्रता को गुणों व अच्छाईयों को तत्त्व दर्शाया गया है -

मिठतु नीवी नानका गुण चंगिआईआ ततु ॥(गु. ग्रं. सा. अंग 147)

फीका बोलना

गुरमति जीव को फीका भाव कड़वे बचन बोलने से मना करती है और फीके बोल बोलने वाले जीव की हर जगह बेइज्जती होती है ।

नानक फिकै बोलिऐ तनु मनु फिका होइ ॥

फिको फिका सदीऐ फिके फिकी सोइ ॥

फिका दरगह सटीऐ मुहि थुका फिके पाइ ॥

फिका मूरखु आखीऐ पाणा लहै सजाइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 473)

पाप नहीं करना

गुरमति पाप कर्मो से बच कर उस दयालु प्रभु की शरण में आने का उपदेश देती है ।

नर अचेत पाप ते डरु रे ॥

दीन दइआल सगल भै भंजन सरनि ताहि तुम परु रे ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 22)

भेख नहीं करना

गुरमति जीव को भेख न करके सच की कमाई करने का उपदेश देती है -

भेख दिखावै सचु न कमावै ।।कहती महली निकटि न आवै ।।

अतीतु सदाए माइआ का माता ।। मनि नही प्रीति कहै मुखि राता ।।

(गु. ग्र. सा. अंग 738)

भेख या पाखंड धारण करके लोगों को गुमराह करने वालों के लिए गुरू साहिब सख्त शब्दों का प्रयोग करते हुए उन्हें ठग कहते हैं –

गली जिना जपमालीआ लोटे हथि निबग।।

ओइ हरि के संत न आखीअहि बानारसि के ठग ।।(गु. ग्र. सा. अंग 476)

नशा नहीं करना

गुरमति किसी तरह के भी नशे सेवन करने से मना करती है तथा इसके सेवन से जीव को बुरे भले की सूझबूझ नहीं रहती और उसे हर जगह धक्के ही मिलते हैं –

जितु पीते मति दूरि होइ बरलु पवै विचि आइ ।।

आपणा पराइआ न पछाणई खसमहु धके खाइ ।।

जितु पीतै खसमु विसरै दरगह मिलै सजाइ ।।

झूठा मदु मूलि न पीचई जे का पारि वसाइ ।। (गु. ग्र. सा. अंग 554)

यथा

पान सुपारी खातीआ मुखि बीड़ीआ लाईआ ।।

हरि हरि कदे न चेतिए जमि पकड़ि चलाईआ।। (गु. ग्र. सा. अंग 726)

मूर्ति व देवी पूजा का निषेध

गुरबाणी एक अकाल पुरख के इलावा किसी भी देवी देवते की पूजा का निषेध करती है और साथ ही निरगुण की पूजा का सिद्धांत देकर सिक्ख को मूर्ति पूजा करने से भी रोकती है । अगर यह मूर्ति सच्ची होती तो वह इसे बनाने वाले को ही खा जाती जो इसकी छाती पर पाँव रख कर इसे छीलता है ।

पाखान गढि कै मूरति कीनी दे कै छाती पाउ ।।

जे एह मूरति साची है तउ गडणहारे खाउ।। (गु. ग्र. सा. अंग 479)

जो जिसकी सेवा करता है, वह वैसा ही रूप धारण कर लेता है –

सिव सिव करते जो नरु धिआवै बरद चढे डउरु डमकावै ।।

महा माई की पूजा करै । नर सै नारि होइ अउतरै ।। (गु. ग्र. सा. अंग 874)

नम्रता

जिस प्रकार वृक्ष की शाखाएं फलों के कारण नीचे की ओर झुक जाती हैं, उसी प्रकार शक्ति के सब गुणों से भरपूर होने के फलस्वरूप, हउमै को त्याग कर मन को झुकाना ही नम्रता है । जीव हउमै को त्याग कर जितना नम्र होता है, उतना ही वह आत्मिक दृष्टि से ऊँचा गिना जाता है –

आपस कउ जो जाणै नीचा ॥

सोऊ गनीऐ सभ ते ऊचा॥ (गु. ग्र. सा. अंग 266)

गुरू नानक साहिब ने अपने आप को अति नम्रता वाले भाव से सम्बोधित किया है । 'जपु' जी की अठारहवीं पउड़ी में गुरू साहिब ने मूर्खों, चोरों, पापियों, निंदकों के कुकर्मों का वर्णन करते हुए अन्त में अपने को नीच कहा है -

नानक नीचु कहै वीचारु ।

गुरसिक्रव

गुरू ग्रंथ साहिब में दी गई गुरसिक्रव की परिभाषा -

गुर सतिगुर का जो सिरवु अरवाए ॥

सु भलकै उठ हरि नामु धिआवै ॥

उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अमृत सरि नावै ॥

उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविरव पाप दोरव लहि जावै ॥

फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहादिआ उठदिआ हरिनामु धिआवै ॥

जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि सो गुरसिरवु गुरू मनि भावै ॥

जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी ।

तिसु गुरसिरव गुरू उपदेसु सुणावै ॥

जनु नानकु धूड़ि मंगै सितु गुरसिरव की ॥

जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 303)

सांझीवालता

सारे जीव एक प्रभु की आस में जीते हैं -

सभु को आसै तेरी बैठा ॥ घट घट अंतरि तूंहे वुठा ॥

सभे सांझीवाल सदाइनि तूं किसै न दिसहि बाहरा जीउ ॥(गु. ग्र. सा. अंग 97)

वह हम सभी का पिता है, जिसे सब की चिन्ता है ।

तूं साझा साहिबु बापु हमारा ॥

नउ निधि तेरे अरवुट भंडारा ॥

जिसु तूं देहि सु तृपति अधावै सोई भगतु तुमारा जीउ ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 97)

जब जीव की परमात्मा के गुणों से सांझ पड़ जाती है तो उसे परमात्मा के सर्वव्यापक होने के बारे में ज्ञान हो जाता है -

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै ॥ राम बिना कोबोलै रे॥ (गु. ग्र. सा. अंग 988)

फिर उसे सब अपने ही नज़र आते हैं, भाव सब से उसकी सांझ पड़ जाती है -

ना को बैरी नहीं बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥(गु. ग्र. सा. अंग 1299)

नदर

गुरू ग्रंथ साहिब में 'नदर' शब्द का प्रयोग कृपादृष्टि, रहमत या मेहर के रूप में किया गया है -

करि करि वेखै नदरि निहाल ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 8)

गुरू के बताए हुए मार्ग पर चलते हुए शरीर को प्रेमरूपी बर्तन बना कर, गुरू के शब्द की कमाई करने से जीव के ऊपर अकाल पुरख की ऐसी नदर होती है कि वह निहाल हो जाता है और मन टिकाव में आ जाता है -

जतु पाहारा धीरजु सुनिआरु ॥ अहरणि मति वेदु हथीआरु ॥
भउ खला अगनि तप ताउ॥ भांडा भाउ अमृतु तितु ढालि ॥
घड़ीऐ सबदु सची टकसाल ॥ जिन कउ नदरि करमु तिन कार ॥
नानक नदी नदरि निहाल ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 8)

उद्यम

बिना उद्यम के जीव अपने कइन उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सकता । पंचम पातशाह प्रभु को मिलने के लिए उद्यम करने पर जोर देते हैं -

उदमु करेदिआ जीउ तूं कमावदिआ सुख भुंचु ॥
धिआइदिआ तू प्रभु मिलु नानक उतरी चित ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 522)

आत्मिक शान्ति

सतिगुरु के मेल से हृदय रूपी घर में सुख शान्ति आ जाती है -

सतिगुरु मिलै सभु तृसन बुझाए ॥
नानक नामि सीति सुखु पाए ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 644)

धैर्य

प्रभु का नाम जपने से मन को धैर्य (धीरज) आ जाता है -

जब देखा तब गावा ॥ तउ जन धीरजु पावा ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 656)

लंगर

गुरू नानक साहिब ने इस संस्था की नींव 'वंड छकण' के सिद्धांत पर रखी । गुरू अंगद देव जी द्वारा चलाए जा रहे लंगर में माता खीवी जी की सेवा का हवाला 'सते बलवंड की वार' में से मिलता है -'

बलवंड खीवी नेक जन जिसु बहुती छाउ पत्राली ॥
लंगरि दउलति वंडीऐ रसु अमृतु खीरि घिआली ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 967)

इसके साथ साथ गुरू घर में शब्द का लंगर भी बांटा जाता है, जो जीव की आत्मा का आहार है ।

लंगरु चलै गुर सबदि हरि तोटि न आवी खटीऐ ॥

खरचे दिति खसम दी आप खहदी खैरि दबटीऐ ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 967)

कीर्तन

गुरबाणी को रागों में उच्चारण करने को कीर्तन कहते हैं । यह सिक्ख धर्म की भक्ति का एक खास अंग है ।

हरि कीरतनु सुणै हरि कीरतनु गावै ॥
तिसु जन दूखु निकटि नहीं आवै ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 190)

कीर्तन निर्मोलक हीरा है, जिसका मूल्य नहीं लगाया जा सकता -

कीरतनु निरमोलक हीरा ॥ आनन्द गुणी गहीरा ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 893)

अमृत वेला

जपु जी साहिब की चौथी पउड़ी में गुरू नानक साहिब प्रश्न रखते हैं कि प्रभु को कौन सी वस्तु अर्पण करे जिससे उसके दरबार के दर्शन हो सकें तथा मुँह से क्या बोले जिससे प्रभु हमें प्यार करे । इसके उत्तर में आगे बचन कहते हैं कि 'अमृत वेले' उठ कर उसकी वडिआई (प्रशंसा) करने से प्रभु की नदर होती है तथा उसके दर पर प्रवान हुआ जाता है -

फेरि कि अगै रखीऐ जितु दिसै दरबारु ॥
मुहौ कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणि धरे पिआरु ॥
अमृत वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु ॥
करमी आवै कपड़ा नदरी मोखु दुआरु ॥
नानक एवै जाणीऐ सभु आपे सचिआरु ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 2)

जब जीव - पपीहा उठ कर प्रभु के आगे अरदास (प्रार्थना या पुकार) करता है तो वह प्रभु की दरगाह में सुनी जाती है और जीव तृप्त हो जाता है -

बाबीहा अमृत वेलै बोलिआ ताँ दरि सुणी पुकार ॥
मेघै नो फुरमानु होआ वरसहु किरपा धारि ॥
हउ तिन कै बलिहारणै जिनी सचु रखिआ उरि धारि॥
नानक नामे सभ हरीआवली गुर कै सबदि वीचारि ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 1285)

सच्चा व्यापार

असल व्यापारी वह है जो दुनियावी वस्तुओं को भोगते हुए भी प्रभु नाम का व्यापार करते हैं और उनका प्रभु के दरबार में मूल्य पड़ता है ।

सचु वापारु करहु वापारी ॥ दरगह निबहै खेप तुमारी ॥ (गु. ग्र. सा. अंग 293)

प्रभु के सेवक सच्चे नाम का ही व्यापार करते हैं -

किनही बनजिआ कौसी ताँबा किनही लउग सुपारी ॥

संतहु बनजिआ नामु गोबिद का ऐसी खेप हमारी ।।(गु. ग्र. सा. अंग 1123)

सच बोलना

गुरमति गुरू के बताई हुई राह पर चलते हुए हमेशा सच बोलने का उपदेश देती है –

बोलीऐ सचु धरमु झूठु न बोलीऐ ।।
जो गुरु दसै वाट मुरीदा जोलीऐ ।। (गु. ग्र. सा. अंग 488)

निर्मलता

मन की मैल के धोये जाने से ही भीतर शुद्ध व निर्मल होता है और इसकी प्राप्ति गुरू के बताए मार्ग पर चल कर हो सकती है –

जीअहु निरमल बाहरहु निरमल ।।
बाहरहु त निरमल जीअहु निरमल,सतिगुर ते करणी कमाणी ।।
कूड़ की सोइ पहुचै नाही मनसा सचि समाणी ।।
जनमु रतनु जिनी खटिआ भले से वणजारे ।।
कहै नानकु जिन मंनु निरमलु सदा रहहि गुर नाले ।। (गु. ग्र. सा. अंग 919)

भाणा

इस सँसार में सब कुछ प्रभु की रज़ा से ही हो रहा है ।

जो किछु वरतै सभ तेरा भाणा ।। (गु. ग्र. सा. अंग 193)

जीव का सँसार में आना जाना प्रभु की रजा (भाणे) से ही होता है ।

जमणु मरणा हुकमु है भाणै आवै जाइ ।। (गु. ग्र. सा. अंग 472)

पारिवारिक रिश्ते

गुरमति जीव को सँसार में रहते हुए अपने पारिवारिक रिश्तों का सत्कार करने के लिए कहती है –

काहे पूत झगरत हउ संगि बाप ।।
जिन के जणे बडीरे तुम हउ तिन सिउ झगरत पाप ।। (गु. ग्र. सा. अंग 1200)

मित्रता

वही जीव परमात्मा से निकटता प्राप्त कर सकता है जो सभी के साथ एक जैसा व्यवहार करे व हरेक को अपना मित्र (मीत) जाने ।

सभु को मीतु हम आपन कीना हम सभना के साजन ।।
दूरि पराइओ मन का बिरहा ता मेलु कीओ मेरै राजन ।। (गु. ग्र. सा. अंग 671)

मैत्रीपूर्ण व्यवहार से ही जीव आनन्द की प्राप्ति कर सकता है ।

दुविधा

दुविधा से भाव दुचितापन है । यह वह अवस्था है जब दुनियावी मोह माया में भटकता मन टिकाव में नहीं रहता ।

दुबिधा विचि बैरागु न होवी जब लगु दूजी राई ।। (गु. ग्र. सा. अंग 634)

प्रभु की सिफत-सलाह करने से सारी दुविधा दूर हो जाती है ।

होइ इकत्र मिलहु मेरे भाई दुबिधा दूरि करहु लिव लाइ ।।
हरि नामै के होवहु जोड़ी गुरमुखि बैसहु सफा विछाइ ।। (गु. ग्र. सा. अंग 1185)

नाशमानता

इस सँसार में सभी कुछ नाशवान है -

जो आइआ सो चलसी सभु कोई आई वारीऐ ।। (गु. ग्र. सा. अंग 474)

इसीलिए उस करतार का ही सिमरन करो जो हमेशा स्थिर रहने वाला है।

जो उपजिओ सो बिनसि है परो आजु कै कालि ।।
नानक हरि गुन गाइ ले छाडि सगल जंजाल ।। (गु. ग्र. सा. अंग 1429)

कर्म

गुरू ग्रंथ साहिब में 'करम' शब्द तीन रूपों में आया है। प्रथम 'करम' का भाव है - कर्म जो कुछ हम करते हैं -

जेहे करम कमाइ तेहा होइसी ।। (गु. ग्र. सा. अंग 730)

दूसरा 'करम' से भाव है अकाल पुरख की बख्शीश, मेहर, कृपा

जिस नो करमि परापति होवै सो जनु निरमलु थीवै ।। (गु. ग्र. सा. अंग 616)

'करम' का तीसरा रूप है - कर्मकांड जो कि गुरमति के विपरीत हैं -

करम कँाड बहु करहि अचार ।। बिनु नावै ध्रिगु ध्रिगु अहंकार ।।
(गु. ग्र. सा. अंग 162)

हर्ष-शोक

प्रभु की आज्ञा में रह कर जीव खुशी व गमी दोनों से निर्लेप हो जाता है -

आगिआ महि भूख सोई करि सूखा सोग हरख नही जानिओ ।।
जो जो हुकमु भइओ साहिब का सो माथै ले मानिओ ।। (गु. ग्र. सा. अंग 1000)

मानव जन्म

मनुष्य धरती पर सभी योनियों का सरदार करके माना जाता है -

अवर जोनि तेरी पनिहारी ।।
इसु धरती महि तेरी सिकदारी ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 374)

लेकिन मनुष्य देह पाकर जो जीव प्रभु की प्राप्ति के प्रयत्न नहीं करता, वह जन्म मरण के जाल में पड़ कर दुख भोगता है -

इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै सो आइ जाइ दुखु पाइदा ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 675)

यह मनुष्य देह परमात्मा को मिलने का समय है -

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 378)

बुरा भला

गुरबाणी से शिक्षा मिलती है कि क्रोध को त्याग कर जीव को बुरे का भी भला करना चाहिए ।

फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाइ ॥
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 728)

साथ ही यह भावना होनी चाहिए -

हम नहीं चंगे बुरा नहीं कोइ ॥ प्रणवति नानकु तारे सोइ ॥
(गु. ग्रं. सा. अंग 278)

सुख दुख

मनुष्य जीवन सुख व दुख का सुमेल है लेकिन फिर भी कभी किसी ने दुख नहीं माँगा, बल्कि सारे सुख की ही कामना करते हैं -

सुख कउ मागै सभु को दुखु न मागै कोइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 57)

सुख केवल परमात्मा के नाम में है -

सुखु नाही बहुतै धनि खाटे ॥ सुखु नाही पेखे निरति नाटे ॥
सुखु नाही बहु देस कमाए ॥ सरब सुखा हरि हरि गुण गाए ॥
(गु. ग्रं. सा. अंग 1147)

जीवन के असली भेद को उसने जाना है जो सुख दुख को एक समान जानता है ।

सुखु दुखु दोनो सम करि जानै अउरु मानु अपमाना ॥
हरख सोग ते रहै अतीता तिनि जगि ततु पछाना ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 219)

जवानी

जीव को धन या जवानी का मान नहीं करना चाहिए क्योंकि मौत आने पर यह शरीर कागज़ की तरह गल जाता है -

धन जोबन का गरबु न कीजै ॥
कागद जिउ गलि जाहिगा ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1166)

साथ ही जवानी के जोश में जीव अपना बुरा भला नहीं पहचानता -

दूजै पहरै रैणि के वणजारिआ मित्रा भरि जुआनी लहरी देइ ॥
बुरा भला न पछाणई वणजारिआ मित्रा मनु मता अहंमेइ ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 77)

चतुराई

संसार में रहते हुए चाहे चतुराई की आवश्यकता पड़ती है लेकिन परमात्मा की दुनिया में यह किसी काम की नहीं -

चतुराई सिआणपा कितै कामि न आईऐ ॥
तुठा साहिबु जो देवै सोई सुखु पाइऐ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 396)

चाहे जीव हज़ारों चतुराइयों या सयानपों का मालिक हो, अन्त समय कोई भी चतुराई उसका साथ नहीं देती ।

सहस सिआणपा लख होहि त इक न चलै नालि ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1)

चतुर कैसे बनें

असल चतुर या सयाना वही है जो गुरू के शब्द की कमाई करता है तथा प्रभु को भा जाता है -

जिसु देहि दरसु सोई तुधु जाणै ॥ एहु गुर कै सबदि सदा रँग माणै ॥
चतुरु सरूपु सिआणा सोई जो मनि तेरै भावीजा है ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 1074)

प्रधान

प्रधान से भाव है श्रेष्ठ, शोभा वाला व्यक्ति । प्रधान वह है जो -

जिन मनि वसिआ पारब्रहमु से पूरे परधान ॥
तिन की सोभा निरमली परगटु भई जहान ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 45)

जेहा बीजै सो लुणै

जीव को उसके कर्मों के अनुसार ही फल भोगने पड़ते हैं -

आपे बीजि आपे ही खाहु ॥ नानक हुकमी आवहु जाहु ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 4)

शरीर मनुष्य के लिए कर्मों का खेत है तथा जो कुछ मनुष्य इसमें बीज डालता है, वही कुछ ही काटता है -

जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 134)

नेत्र

इन नेत्रों भाव आँखों से किसी बुरी चीज़ को न देखो और सदा उस प्रभु को ही देखो -

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी,हरि बिनु अवरु न देखहु कोई॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 922)

रसना

जीभ या रसना जब तक परमात्मा का नाम सिमरन नहीं करती, तब तक उसका दूसरे स्वादों के लिए चस्का

समाप्त नहीं होता -

ए रसना तू अन रसि राचि रही,तेरी पिआस न जाइ ॥
पिआस न जाइ होरतु कितै,जिचरु हरि रसु पलै न पाइ ॥

(गु. ग्रं. सा. अंग 921)

कान

वे कान भले हैं जो प्रभु का यश ही सुनते हैं -

ए स्रवणहु मेरिहो साचै सुनणै नो पठाए ॥
साचै सुनणै नो पठाए सरीरि लाए सुणहु सति बाणी ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 922)

तीर्थ स्नान

गुरबाणी के अनुसार परमात्मा का नाम ही असल तीर्थ है -

तीरथि नावण जाउ तीरथु नामु है ॥
तीरथु सबद बीचारु अंतरि गिआनु है ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 687)

मौत

सब ने इस सँसार से चले जाना है, यहाँ सदा के लिए नहीं रहना -

सभना मरणा आइआ वेछोड़ा सभनाह ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 595)

चाहे कोई अमीर हो या गरीब, सभी ने बारी बारी यहाँ से चले जाना है ।

राणा राउ न को रहै रंगु न तुंगु फकीरु ॥
वारी आपो आपणी कोइ न बंधै धीर ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 926)

पाँच चोर

गुरू ग्रंथ साहिब में काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार जैसे अवगुणों या विकारों को पाँच चोर कहा गया है जो इस शरीर में बसते हैं । जब तक जीव इन विकारों में फंसा रहता है, तब तक वह अंधकार में भटकता रहता है ।

इसु देही अंदरि पंच चोर वसहि,कामु क्रोधु लोभु मोहु अहंकारा ॥
अमृतु लूटहि मनमुख नही बूझहि, कोइ न सुणै पूकारा ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 600)

काम

यह बहुत ही शक्तिशाली विकार है जो शरीर को निर्बल कर देता है ।

कामु क्रोधु काइआ कउ गालै ॥
जिउ कंचन सोहागा ढालै ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 932)

क्रोध

क्रोध में ग्रस्त हुए विकारी व्यक्ति का आत्मिक जीवन तबाह हो जाता है और वह अपनी इज्जत व अक्ल गंवा लेता है ।

क्रोधु बिनासै सगल विकारी ।। पति मति खोवहि नामु विसारी ।।

(गु. ग्रं. सा. अंग 225)

लोभ

वे लोग अज्ञानी व मूर्ख हैं जो लोभ, लालच जैसे विकारों में फंस कर परमात्मा को बिसार देते हैं ।

लोभ विकार जिना मनु लागा,हरि विसरिआ पुरखु चंगेरा ।।

ओइ मनमुख मूड़ अगिआनी कहीअहि,तिन मसतकि भागु मंदेरा ।।

(गु. ग्रं. सा. अंग 711)

मोह

मोह में सारा सँसार डूबा हुआ है । कोई विरला ही है जो गुरू की राह पर चलता हुआ इस मोह के भव-सागर से पार निकलता है ।

एतु मोहि डूबा सँसारु ।। गुरमुखि कोई उतरै पारि।।

एतु मोहि फिरि जूनी पाहि ।। मोहे लागा जम पुरि जाहि ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 356)

अहंकार

जो जीव बहुत अहंकार करता है, उसे मिट्टी में मिलते समय एक पल भी नहीं लगता ।

जे को बहुतु करे अहंकारु ।।

ओहु खिन महि रुलता खाकू नालि ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 868)

निंदा

निंदा से भाव है किसी की चुगली करनी । गुरमति जीव को निंदा करने से रोकती है ।

निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करनि ।।

मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवनि ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 755)

निंदा करनी छोड़नेसे जीव के मन की सारी चिंताएं दूर हो जाती हैं ।

प्रथमे छोडी पराई निंदा ।।

उतरि गई सभ मन की चिंदा ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 1147)

तृष्णा

तृष्णा सेभाव है असंतोष, लालच, प्यासा आदि

तृसना अगनि जलै संसारा ।। जलि जलि खपै बहुतु विकारा ।।

(गु. ग्रं. सा. अंग 1044)

प्रभु जी के नाम से जुड़ने से जीव की तृष्णा खत्म हो जाती है ।

तृसना बुझै हरि कै नामि ॥
महा संतोखु होवै गुर बचनी,प्रभ सिउ लागै पूरन धिआनु ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 682)

पराया हक

पराया हक मारना एक बड़ा दोष है । इस्लाम धर्म में सूअर को मारना व हिन्दू धर्म में गाय हत्या पाप माना जाता है । यह उदाहरण देते हुएगुरू नानक साहिब बचन करते हैं -

हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥
गुरु पीरु हामा ता भरे जा मुरदारु न खाइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 141)

जो जीव पराई वस्तु की ओर नहीं देखते, प्रभु उनके संग बसता है -

पर धन पर दारा परहरी ॥ ता कै निकटि बसै नरहरी ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1163)

चिन्ता

चिन्ता एक बड़ा मानसिक रोग है । मनुष्य के लिए दुनियावी सुखों की लालसा चिन्ता का कारण बनती है । गुरमति के अनुसार उस पालनहार प्रभु को सभी की चिन्ता है, इसीलिएहमें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं ।

नानक चिंता मति करहु चिंता तिस ही हेइ ॥
जल महि जंत उपाइअनु तिना भि रोजी देइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 955)

चिन्ता उस बात की करो जो अनहोनी हो, होना वही कुछ है जो उस करतार को अच्छा लगता है -

चिंता ता की कीजीऐ जो अनहोनी होइ ॥
इहु मारगु संसार को नानक थिरु नही कोइ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1429)

क्षमा

अपने साथ दुर्व्यवहार करने वाले को सजा न देकर उसकी गलतियों को बिसार देना ही क्षमा है ।

कबीरा जहा गिआनु तह धरमु है जहा झूठु तह पापु॥
जहा लोभु तह कालु है जहा खिमा तह आपि॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1372)

जाति-पाति

गुरमति में जाति-पाति के भेदभाव को कोई स्थान प्राप्त नहीं है । जो जीव अपनी जाति का गर्व करता है, वह मूर्ख है और उसमें बहुत विकार पैदा हो जाते हैं ।

जाति का गरबु न करि मूरख गवारा ॥
इसु गरब ते चलहि बहुतु विकारा ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1127)

जो गुरू शब्द का सहारा लेते हैं, उनके भीतर ये भ्रम मिट जाते हैं ।

जाति बरन कुल सहसा चूका,गुरमति सबदि बीचारी ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 1199)

माया के कारण दुनिया का मोह पड़ जाता है लेकिन गुरू की कृपा से जिनकी प्रीत की डोर प्रभु चरणों से जुड़ी रहती है, उन्हें माया में रहते हुए भी आत्मिक आनन्द मिल जाता है ।

एह माइआ जितु हरि विसरै,मोहु उपजै भाउ दूजा लाइआ।।
कहै नानकु गुर परसादी जिना लिव लागी,तिनी विचे माइआ पाइआ ।।
(गु. ग्रं. सा. अंग 922)

गुरू, शब्द गुरू व गुरू पंथ

'गुरू' शब्द श्री धातु से बना है जिसका अर्थ है निगलना व समझाना। इससे यह भाव लिया जाता है कि जो अज्ञान को खा जाता है व सिक्ख को तत्त्व ज्ञान समझाता है । गुरू से भाव बड़ा याभारी और उस्ताद भी लिया जाता है । सिक्ख धर्म में गुरू पारब्रह्म के रूप में भी प्रयोग किया जाता है ।

गुरु समरथु गुरु निरंकारु गुरु ऊचा अगम अपारु ।।
गुर की महिमा अगम है किआ कथे कथनहारु ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 52)

गुरू ज्ञान का स्रोत है और गुरू के बगैर ज्ञान नहीं हो सकता । गुरू के बिना तो अज्ञानता का अंधेरा ही अंधेरा है ।

जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार ।।
एते चानण होदिआँ गुर बिनु घोर अंधार ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 43)

गुरू का उपदेश ही कल्याणकारी है तथा उस पर चलना ही जीव का मनोरथ है । इस उपदेश से वंचित रह कर मनुष्य जीवन की बाजी हार जाता है ।

शब्द गुरू

सबदु गुर पीरा गहिर गंभीरा बिनु सबदै जगु बउरानं ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 635)

जिस शब्द को गुरू कहा गया है, वह शब्द ईश्वरीय पैगाम है, ब्रह्म या करतार का अनुभव है जो गुरू द्वारा इस सँसार पर प्रकट हुआ है । बाणी के अन्दर'शब्द' को उस परमात्मा का निजि अनुभव कहा गया है और इसकी अरूप परमात्मा के सुन्दर चरण-कंवल के रूप में प्रशंसा की गई है ।

हिरदैचरण सबदु सतिगुर को नानक बाँधिए पाल ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 680)

सतिगुरू से नाज़ल हुआ यह परमात्मा का अनुभव रूपी शब्द, बाणी द्वारा प्रकट हुआ है, इसीलिए 'धुर की बाणी' को ही गुरू का दर्जा दिया गया है -

धुर की बाणी आई । तिनि सगली चिंत मिटाई ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 628)

यह 'धुर की बाणी' ही गुरू है और इसी बाणी भाव शब्द गुरूद्वारा ही धर्मी जीवन घड़ा जाता है -

भाँडा भाउ अमृतु तितु ढालि ।। घड़ीऐ सबदु सची टकसाल ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 8)

इसे ढ़ालने की राह है सुरति को शब्द में जोड़ना व उस परमात्मा के स्वरूप में लीन होना ।

गुरू पंथ

'सिक्ख रहित मर्यादा' के अनुसार तैयार-बर-तैयार सिंहों के समूचे समूह को 'गुरू पंथ' कहते हैं । इसकी तैयारी दस गुरू साहिबान ने की एवं दसम पातशाह ने इसको अन्तिम स्वरूप मान कर गुरगद्दी सौंप दी । पंथ की

संकल्पना गुरू नानक पातशाह के समय से ही आरम्भ होती है –

नानकि राजु चलाइआ सचु कोटु सताणी नीव दै ॥

लहणे धरिएनु छतु सिरि करि सिफती अमृतु पीवदै ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 966)

गुरू नानक पातशाह ने अपनीज्योति गुरू अंगद साहिब में टिका कर गुरगद्दी उन्हें सौंप दी –

जोति ओहा जुगति साइ सहि काइआ फेरि पलटीऐ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 966)

गुरू नानक साहिब ने गुरू अंगद देव जी को गुरू थाप कर उनके आगे शीश झुका दिया । 'आपे गुर चेला' की डाली हुई यह परम्परा दसम पातशाह तक निर्विघ्न चलती रही । 1699 ईस्वी की वैसाखी को खालसा सृजना हुई तो शख्सी गुरू का सिलसिला समाप्ति की ओर बढ़ रहा था । यह एक और कदम उस दिशा की ओर था जब गुरू दीक्षा का अधिकार पाँच गुरसिक्खों ने दिया । गुरू की जिम्मेवारी को निभाने का अधिकार पाँचों के पास आना एक मील पत्थर था ।

1708 ईस्वी में दसम पातशाह गुरू गोबिन्द सिंह जी ने गुरूज्योति तो गुरू ग्रंथ साहिब जी में सुभायेमान की और गुरू युक्ति के वरतारे का अधिकार गुरू ग्रंथ साहिब जी की ताबियां के नीचे पाँच प्यारों की अगुवाई में 'गुरू पंथ' को दे दिया ।

गुरू ग्रंथ साहिब की विलक्षणता

' आदि ग्रंथ' के सम्पादन के पीछे गुरू साहिबान के मन में एक बड़ा प्रश्न था, क्योंकि दुनिया के अन्य ध र्म ग्रंथों को संग्रहित करने की जिम्मेवारी उन धर्मों की बौद्धिक उत्तमता ने निभाई थी । उदाहरण के रूप में, पवित्र बाईबल पैगम्बर यीसू के परलोक गमन से 100 वर्ष पश्चात् सामने आया, पवित्र कुरआन का सम्पादन खलीफा उरमान के समय सम्पूर्ण हुआ, पवित्र वेद लम्बा समय श्रुति व स्मृति के हिस्सा रहे, जैन धर्म के धर्म ग्रंथ इस ध र्म के अन्तिम तीर्थांकर महावीर जैन से 925 वर्ष पश्चात् संकलित किए गए और बुद्ध धर्म के पवित्र ग्रंथों को लिखित रूप (सिल्लियों के ऊपर) 85 बी. सी. में लिखा ।

उपरोक्त धर्म ग्रंथों के सृजना इतिहास की ओर नज़र डालने के उपरान्त, गुरू ग्रंथ साहिब जी की विलक्षणता की झलक स्पष्ट नज़र आने लग जाती है, क्योंकि –

1. धर्मों के इतिहास में यह एक ऐसा धर्म ग्रंथ है जिसे गुरू रूप में प्रवान किया हुआ है। यह दुनिया काएक ही वाहिद धार्मिक इलाही ग्रंथ है जिसे प्रकाश करना, संतोखना,हुक्म लेने का विभिन्न विधि-विधान है जो अन्य किसी धर्म ग्रंथ को हासिल नहीं है।

2. यह एक ही ऐसा धर्म ग्रंथ है जिसका सम्पादन स्वयं धर्म के प्रवर्तकों द्वारा खुद किया गया है, इसीलिए 'गुरू ग्रंथ साहिब' शंकाओं व किन्तुपरन्तुओं से मुक्त है ।

3. गुरू ग्रंथ साहब में कहीं भी सिक्ख गुरू साहिबान की कथा-कहानियों को चमत्कारी रूप में पेश नहीं किया हुआ है ।

4. गुरू ग्रंथ साहिब के भीतर का चिंतन, मानव मुक्ति के द्वार खोलता हुआ एक ऐसे मनुष्य की तस्वीर की सृजना करता है जो मानवता की 'बंद खलासी' तथा 'पत सेती' जीवन के लिए जिन्दगी व मौत को एक जैसा समझता है।

5. गुरू ग्रंथ साहिब जी हिन्दुस्तान के 500 वर्ष (बारहवीं से सत्रहवीं सदी) के इतिहास का भी स्त्रोत है। गुरू ग्रंथ साहिब जी के उपरोक्त विलक्षण तत्त्वों के अलावा कुछ महत्वपूर्ण तत्त्वों को विस्तार में देख लेना जरूरी हो जाता है ।

1. अकाल पुरख की एकता

हर धर्म का केन्द्रीय सिद्धांत किसी अद्भुत शक्ति में विश्वास है और यह सिद्धांत ही धर्म की बुनियाद भी है लेकिन समस्या उस समय पैदा हो जाती है, जब सारे धर्म उपरोक्त सिद्धांत को अपना आधारभूत स्वीकार करते हुए अकाल पुरख की एकता का प्रश्नचिन्ह खड़ा कर देते हैं । इस बात को सामी धर्म जैसे यहूदी, ईसाई, इस्लाम में भी देखा जा सकता है तथा भारतीय धर्म दर्शन के क्षेत्र में भी ।

यहूदी धर्म एक अकाल पुरख में विश्वास का धारक है लेकिन वह अकाल पुरख को अपने धर्म तक सीमित करके, यहूदी कौम को प्रभु की चुनी हुई कौम का अलग प्रसंग खड़ा कर देता है । ईसाई धर्म भी एक अकाल पुरख में दृढ़ निश्चय रखता है तथा उसी को सारी कायनात का कादर भी स्वीकार करता है लेकिन साथ ही ऐसा सिद्धांतक प्रसंग खड़ा कर देता है जिससे अकाल पुरख का संकल्प एवं कर्त्तव्य शंका में पड़ जाते हैं क्योंकि वह उस प्रभु की प्राप्ति का माध्यम केवल उसके पुत्र 'यीसु मसीह' को ही मानता है । बाईबल में अंकित है कि यीसु ही प्रभु के घर का द्वार है तथा जिसने उसे पाना है, उसे यीसु में से होकर निकलना पड़ेगा । हिन्दु धर्म में अकाल पुरख का निरगुण व सरगुण वाला भेद, बहुदेववाद, विष्णु का अवतारवाद या उसे किसी एक रूप में प्रवान करके भी उसका तीन रूपों में प्रकटाव की कई उदाहरणें हैं । इस सब के नतीजे के तौर पर प्रभु को सब ने अपने ध र्म या अपने कब्जे में करने की कोशिश की और हर धर्म के लोग केवल अपने धर्म व धर्मग्रंथ को ही उच्चतम मानने लगे ।

श्री गुरूग्रंथ साहिब ने अकाल पुरख की एकता का एक विलक्षण प्रसंग स्थापित करते हुए अकाल पुरख के द्वैत रूप पर ही कलम नहीं फेरी बल्कि एक प्रभु व एक लोकाई का अनोखा प्रसंग स्थापित कर हर प्रकार का वाद-विवाद ही समाप्त कर दिया ।

अकाल पुरख का 'एक' होना जहाँ सामी धर्मो की वलगणों को तोड़ता था, वहीं उसके मीरी गुण-अकाल मूरति, अजूनी, सैभं ने यह अस्वीकार कर दिया कि वह अवतार धारण करने वाला हो ही नहीं सकता, भाव वह जन्म मरण के घेरे से बाहर है ।

इसके साथ साथ अकाल पुरख का नाम याहोवा, परमेश्वर या अल्लाह भी हो सकता है, का बिल्कुल अस्वीकार कर फरमान दिया -

कहु नानक गुरि खोए भरम ।। एको अलहु पारब्रहम ।। (गु. ग्रं. सा. अंग 897)

साथ ही गुरू साहिब ने सारी कायनात को एक में से उपजी बता कर अकाल पुरख की प्राप्ति के लिए ज़बरी धर्म परिवर्तनों को पूर्णतया मानने से इन्कार कर दिया ।

2. मानव एकता

सिक्ख धर्म का मुख्य निशाना ईश्वरीय एकता, मानव एकता एवं सामाजिक एकता है । गुरू ग्रंथ साहिब ने 'इेक पिता इेकस के हम बारिक' तथा 'कुदरति के सभि बंदे' का एलान करके मनुष्य मनुष्य में खड़े किए हर भेदभाव को मानने से पूर्णतया इन्कार कर दिया । गुरू ग्रंथ साहिब ने जाति प्रथा एवं ऊँच-नीच जैसी

सामाजिक बुराइयों का पुरज़ोर निषेध किया है और सब मनुष्यों को एक बड़ी ज्योति से उपजा हुआ बताया है -

सगल बनसपति महि बैसँतरु सगल दूध महि घीआ ॥

ऊच नीच महि जोति समाणी घटि घटि माधउ जीआ ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 617)

गुरू ग्रंथ साहिब ने इस एलाननामे से एक नई चेतना लहर खड़ी कर दी । इससे तथाकथित नीचों, दलितों व आर्थिक तौर पर शोषित वर्ग के अन्दर एक नई चेतना का विकास हुआ, जिसने आने वाले समय में नई ऐतिहासिक सृजना कर 'नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु' का प्रसंग स्थापित कर दिया ।

गुरू साहिब ने जहाँ प्रचलित भारतीय जाति-पाति प्रथा का निषेध किया, वहीं गुरू ग्रंथ साहिब का अपना स्वरूप इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि गुरू साहिब का सिद्धांत 'सांझ करीजे गुणह केरी' या न कि ऊँच-नीच । गुरू साहिब ने शूद्र व ब्राह्मण, हिन्दू व मुसलमान का भेद मिटा कर सारे भक्त साहिबान की बाणी को एक जैसा आदरभाव देकर अपनी बाणी के साथ स्थान दिया ।

3. धर्म की एकता

सिक्ख धर्म की अलग होंद (अस्तित्व) का एक अपना विलक्षण संदर्भ है और इस संदर्भ का मूल आधार श्री गुरू ग्रंथ साहिब है इसीलिए यहाँ इसे विलक्षणता के मीरी गुण के तौर पर सामने लाने का प्रयत्न किया जा रहा है ।

गुरू ग्रंथ साहिब जी की सम्पादना से पूर्व एक धर्म के लिए दूसरे की मनाही थी । हर कोई अपने धर्म को सर्वोच्च और दूसरे धर्म के प्रति निरादर दिखा रहा था । धर्म नफरत व कर्मकांड का रूप धारण का चुका था । धर्म का कार्य मनुष्य की मुक्ति न रह कर पाखंड का रूप धारण कर चुका था ।

गुरू ग्रंथ साहिब ने सिद्धांत प्रसंग की स्थापना करते हुए कहा कि धर्म तो एक ही है, वह है सच्चाई के प्रति विश्वास या निश्चय । अगर सच्चाई दामन में नहीं है तो धर्म ग्रहण किया ही नहीं जा सकता ।

गुरू ग्रंथ साहिब ने पाखंडी रूप धारण कर चुके धर्म व धर्मी व्यक्तियों का नकाब डाल कर घूम रहे लोगों के किरदार को लोगों के सामने रख दिया । गुरू साहिब ने मुसलमान व हिन्दू की चरित्र सृजना करते हुए ब्यान किया -

रब की रजाइ मन्ने सिर उपरि,करता मन्ने आपु गवावै ॥

तउ नानक सरब जीआ मिहरमति होइ,त मुसलमाणु कहावै ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 141)

यथा

सो जोगी जो जुगति पछाणै ॥

गुर परसादीए को जाणै ॥

काजी सो जो उलटी करै ॥

गुर परसादी जीवतु मरै ॥

सो ब्राहमणु जो ब्रहमु बीचारै ॥

आपि तरै सगले कुल तारै ॥ (गु. ग्रं. सा. अंग 662)

गुरू पातशाह ने उपरोक्त सिद्धांत को अमल में तबदील करते हुए उसका विभिन्न प्रसंग गुरू ग्रंथ साहिब के रूप में स्थापित कर दिया और दुनिया के इकलौते धर्मग्रंथ के रूप में इसकी स्थापना का राज यह था कि बिना

किसी धर्म-नस्ल के भेदभाव के इसमें इस्लाम व हिन्दू धर्म के महापुरूषों की बाणी दर्ज करके 'कोई बोलै राम राम कोई खुदाइ' का आलौकिक नाद धरति-लोकाई की भलाई के लिए संस्थात्मक रूप में स्थापित कर दिया ।

पंचम पातशाह गुरू अर्जुन देव जी ने 'शब्द गुरू' की स्थापना के पश्चत सब से अन्त में इस पर मोहर लगा दी तथा इसे अपनी कृत न कह कर अकाल पुरख की बख्शीश ही माना ।

मुंदावणी महला 5

थाल विचि तिनि वसतू पईओ सतु संतोखु वीचारो ।।
अमृत नामु ठाकुर का पइओ जिस का सभसु अधारो।।
जे को खावै जे की भुंचै तिस पर होइ उधारो ।
एह वसतु तजी नह जाई नित नित रखु उरि धारो ।।
तम संसारु चरन लगि तरीऐ सभु नानक ब्रहम पसारो ।।

सलोक महला 5

तेरा कीता जातो नाही मैनो जोगु कीतोई ।।
मै निरगुणिआरे को गुणु नाही आपे तरसु पइओई ।।
तरसु पइआ मिहारामति होई सतिगुरु सजणु मिलिआ ।।
नानक नामु मिलै ताँ जीवाँ तनु मनु थीवै हरिआ ।।

(गु. ग्रं. सा. अंग 1429)

सिक्ख विरसा सैम्पल पेपर – 2008

कनिष्ठ भाग

प्रत्येक प्रश्न का नमूना दिया गया है साथ में सही उत्तर भी दिये गए हैं । कुल अंक 100

प्रश्न 1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर केवल एक पंक्ति में दो । 10

'सोदरू' का शब्द गुरू ग्रंथसाहिब में कितनी बार आया है ।

'सोदरु' का शब्द गुरू ग्रंथ साहिब में तीन बार आया है ।

प्रश्न 2. रिक्त स्थान भरो –

अनंद कारज के समय पढ़ी जाने वाली लावां की बाणी – – राग में है । 10

(सुही)

प्रश्न 3. सही उत्तर पर ठीक का निशान लगाओ । 10

गुरू ग्रंथ साहिब में भक्त बाणी में सबसे ज्यादा बाणी किस भक्त की है –

1. भगत रविदास जी
2. भक्त धन्ना जी
3. भक्त कबीर जी
4. भक्त शेख फरीद जी

प्रश्न 4. निम्नलिखित पंक्तियों के सामने ठीक अथवा गलत का निशान लगाओ । 10

1. गुरू ग्रंथ साहिब जी को गुरगद्दी गुरू अर्जुन देव जी ने दी ।
2. गुरू ग्रंथ साहिब में छ: गुरू साहिबान की बाणी है ।

प्रश्न 5. निम्नलिखित बाणियों के नाम के सामने उसे उच्चारण करने वाले बाणीकार कानाम लिखो ।

10

1. अनंदु साहिब
2. गुरू अमरदास जी

प्रश्न 6. निम्नलिखित विषयों पर गुरू ग्रंथ साहिब जी में दिये गये उपदेश को दर्शाते हुए गुरबाणी की एक एक पंक्ति लिखो। 20

स्त्री का सम्मान (सो किउ मंदा आखीअहि जित जगहि राजान)

प्रश्न 7. 'आदि ग्रंथ' के सम्पादन तथा पहले प्रकाश के बारे में आप क्या जानते हो ? (केवल 50 - 60 शब्दों में लिखो) 10

'सुखमनी साहिब' की बाणी के बारे में लगभग 60 शब्दों में लिखो ।

प्रश्न 8. गुरू अर्जुन देव जी के जीवन, बाणी रचना तथा गुरू ग्रंथ साहिब जी के सम्पादन के बारे में लगभग 150 शब्दों का एक निबंध लिखो । 10

प्रश्न 9. गुरू गोबिन्द सिंह जी के जीवन और उनकी अलौकिक देन के बारे में विस्तार में लिखो ।

सिक्रव विरसा सैम्पल पेपर – 2009

वरिष्ठ भाग

प्रत्येक प्रश्न का नमूना दिया गया है । साथ में सही उत्तर भी दिये गये हैं ।

कुल अंक 100

1. गुरू ग्रंथ साहिब में आए राग 'माझ' के गायन का समय क्या है ? 10
2. 'बारह माह' का सम्बन्ध मनुष्य के भाव से है । 10
3. भक्त नामदेव जी का जन्म किस प्रान्त में हुआ ? 10
    1. कर्नाटक
    2. उड़ीसा
    3. महाराष्ट्र
    4. कश्मीर
4. कालम (अ) और (ब) में क्या सम्बन्ध है ? 10

(अ)	(ब)
तितुरे	8
चऊपदे	3
असटपदी	4

5. बाबा फरीद जी का सम्बन्ध सूफियों के सुहराबादी सिलसिले के साथ था । 10
   हाँ / नहीं
6. 'आलाहणीआ' के बारे में आप क्या जानते हैं ? 10
7. 'पड़ताल' से क्या भाव है ? 10 - 20 शब्दों में वर्णन करो । 10
8. भक्त कबीर जी के जीवन तथा गुरू ग्रंथ साहिब में आपके द्वारा रचित बाणी का सार संक्षिप्त वर्णन करो । (केवल 80 से 100 शब्दों में) 10
9. गुरू अर्जुन देव जी की सिक्रव धर्म को देन के सम्बन्ध में लिखें । (केवल 200 - 250 शब्दों में) 20